तिरुमल तिरुपति देवस्थान

सप्तगिरि

सचित्र मासिक पत्रिका

फरवरी-2020 रु.5/-

श्रीनिवासमंगापुरम्
श्री कल्याणवेंकटेश्वरस्वामीजी का
वार्षिक ब्रह्मोत्सव
१४-०२-२०२० से
२२-०२-२०२० तक

श्रीनिवासमंगापुरम्
श्री कल्याणवेंकटेश्वरस्वामीजी का
वार्षिक ब्रह्मोत्सव
१४-०२-२०२० से
२२-०२-२०२० तक

१४-०२-२०२० शुक्रवार
दिन - ध्वजारोहण
रात - महाशेषवाहन

१५-०२-२०२० शनिवार
दिन - लघुशेषवाहन
रात - हंसवाहन

१६-०२-२०२० रविवार
दिन - सिंहवाहन
रात - मोतीवितानवाहन

१७-०२-२०२० सोमवार
दिन - कल्पवृक्षवाहन
रात - सर्वभूपालवाहन

१८-०२-२०२० मंगलवार
दिन - पालकी में मोहिनी अवतारोत्सव
रात - गरुडवाहन

१९-०२-२०२० बुधवार
दिन - हनुमन्तवाहन
सायं - वसंतोत्सव
रात - गजवाहन

२०-०२-२०२० गुरुवार
दिन - सूर्यप्रभावाहन
रात - चंद्रप्रभावाहन

२१-०२-२०२० शुक्रवार
दिन - रथ-यात्रा
रात - अश्ववाहन

२२-०२-२०२० शनिवार
दिन - चक्रस्नान
रात - ध्वजावरोहण

अस्माकं तु विशिष्टा ये तान्निबोध द्विजोत्तम।
नायका मम सैन्यस्य संज्ञार्थं तान् ब्रवीमि ते।।

(- श्रीमद्भगवद्गीता १-७)

हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! अपने पक्ष में भी जो प्रधान हैं, उनको आप समझ लीजिये। आपकी जानकारी के लिये मेरी सेना के जो-जो सेनापति हैं, उनको बतलाता हूँ।

गीतार्थं ध्यायते नित्यं कृत्वा कर्माणि भूरिशः।
जीवन्मुक्तः सविज्ञेयो देहांते परमं पदम्।।

(- गीता मकरंद, गीता माहात्म्य)

नित्य अनेक कर्म करते हुए भी गीतार्थ का जो ध्यान करता है वह जीवन्मुक्त होकर मृत्यु के बाद मोक्ष पाता है।

ति.ति.दे. मंदिरों की

संदर्शन-यात्रा पैकेज टूर

आंध्रप्रदेश ट्यूरिजम् डेवलप्मेंट कार्पोरेषन्

1. स्थानिक आलयों का दर्शन (प्रतिदिन)

शुल्क	निकलने का स्थान	ट्रिप्स	समय
नान् ए.सी. रु.100/- ए.सी. रु.150/- (10 वर्ष के अन्दर बच्चों को टिकट का जरूरत नहीं है।)	श्रीनिवासम् समुदाय और विष्णुनिवासम्, तिरुपति	6 (छे)	सुबह 6-00 बजे से दोपहर 1-00 बजे तक

दर्शनीय मंदिर

1. श्री पद्मावती देवी मंदिर ... तिरुचानूर
2. श्री अगस्त्येश्वर स्वामी मंदिर ... तोंडवाडा
3. श्री कल्याण वेंकटेश्वर स्वामी मंदिर ... श्रीनिवासमंगापुरम्
4. श्री कपिलेश्वर स्वामी मंदिर ... तिरुपति
5. श्री गोविंदराज स्वामी मंदिर ... तिरुपति

2. तिरुपति के आस-पास मंदिरों का संदर्शन यात्रा (प्रतिदिन)

शुल्क	निकलने का स्थान	ट्रिप्स	समय
नान् ए.सी. रु.250/- ए.सी. रु.350/- (10 वर्ष के अन्दर बच्चों को टिकट का जरूरत नहीं है।)	श्रीनिवासम् समुदाय और विष्णुनिवासम्, तिरुपति	2 (दो)	सुबह 8-00 बजे को और सुबह 9-00 बजे को

दर्शनीय मंदिर

1. श्री वेणुगोपाल स्वामी मंदिर ... कार्वेटिनगरम्
2. श्री वेदनारायण स्वामी मंदिर ... नागुलापुरम्
3. श्री कल्याण वेंकटेश्वर स्वामी मंदिर ... नारायणवनम्
4. श्री प्रसन्न वेंकटेश्वर स्वामी मंदिर ... अप्पलायगुंटा
5. श्री करियमाणिक्य स्वामी मंदिर ... नगरि
6. श्री अन्नपूर्णासमेत काशीविश्वेश्वर स्वामी मंदिर ... बुग्ग
7. श्री पल्लिकोण्डेश्वर स्वामी मंदिर ... सुरुटुपल्लि

अन्य विवरण के लिए कृपया सम्पर्क करें दूरभाष : 0877 - 2289123, 2289120, 9848007033.

सप्तगिरि

तिरुमल तिरुपति देवस्थान की सचित्र मासिक पत्रिका

वेङ्कटाद्रिसमं स्थानं ब्रह्माण्डे नास्ति किञ्चन।
वेङ्कटेश समो देवो न भूतो न भविष्यति॥

वर्ष-५० फरवरी-२०२० अंक-०९

विषयसूची

वन्दे कश्यपात्मजम्...	डॉ.जी.सुजाता	07
श्री गोविंदाचार्य स्वामीजी (एम्बार)	श्री नरसिंग खेखा	11
श्री भक्तिसार स्वामीजी	श्रीमती उषादेवी अगर्वाल	14
श्री कल्याणवेंकटेश्वरस्वामीजी का मंदिर, श्रीनिवासमंगापुरम्	डॉ.जी.मोहन नायुडु	17
महाशिवरात्रि पर्व	श्री ज्योतीन्द्र अजवालिया	21
सुख लाती सूर्य जयन्ती	श्री के.रामनाथन	24
भागवत कथा सागर इन्द्र का घमण्ड और उसके परिणाम	श्री अमोघ गौराँग दास	31
शरणागति मीमांसा	श्री कमलकिशोर हि. तापडिया	33
श्री प्रपन्नामृतम्	श्री रघुनाथदास रान्दड	35
श्री रामानुज नूट्रन्दादि	श्री श्रीराम मालपाणी	38
दिव्य गुणों द्वारा कष्टों से मुक्ति	श्री अमोघ गौराँग दास	39
दिव्यक्षेत्र तिरुमल	श्री पी.वी.लक्ष्मीनारायण	41
जीवन सौख्य की हामी-रुद्राक्ष	श्री वेमुनूरि राजमौलि	45
आइये, संस्कृत सीखेंगे..!!	डॉ.सी.आदिलक्ष्मी	48
शिव-साहित्य की व्यापकता	प्रो.योगेश चन्द्र शर्मा	49
राशिफल	डॉ.केशव मिश्र	51

website: www.tirumala.org or www.tirupati.org वेबसैट के द्वारा सप्तगिरि पढ़ने की सुविधा पाठकों को दी जाती है। सूचना, सुझाव, शिकायतों के लिए - sapthagiri_helpdesk@tirumala.org

गौरव संपादक
श्री अनिलकुमार सिंघाल, आई.ए.एस्.,
कार्यनिर्वहणाधिकारी, ति.ति.दे.

प्रधान संपादक
डॉ.के.राधारमण

संपादक
डॉ.वी.जी.चोक्कलिंगम

उपसंपादक
श्रीमती एन.मनोरमा

मुद्रक
श्री आर.वी.विजयकुमार, बी.ए., बी.एड्.,
उपकार्यनिर्वहणाधिकारी,
(प्रचुरण व मुद्रणालय),
ति.ति.दे. मुद्रणालय, तिरुपति।

स्थिरचित्र
श्री पी.एन.शेखर, छायाचित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।
श्री बी.वेंकटरमण, सहायक चित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।

जीवन चंदा .. रु.500-00
वार्षिक चंदा .. रु.60-00
एक प्रति .. रु.05-00
विदेशियों को वार्षिक चंदा .. रु.850-00

मुखचित्र - श्रीदेवी भूदेवी सहित श्री कल्याणवेंकटेश्वरस्वामी, श्रीनिवासमंगापुरम्।
चौथा कवर पृष्ठ - नंदिवाहनारूढ श्री कपिलेश्वरस्वामी, कपिलतीर्थम्, तिरुपति।

अन्य विवरण के लिएः
CHIEF EDITOR, SAPTHAGIRI, TIRUPATI - 517 507.
Ph.0877-2264543, 2264359, 2264360.

सूचना

मुद्रित रचनाओं में व्यक्त किये विचार लेखक के हैं। उनके लिए हम जिम्मेदार नहीं हैं।

- प्रधान संपादक

आदित्य : समस्त जगत का स्वास्थ्य प्रदाता

''आदित्याना महं विष्णुः, ज्योतिषां रविरंशमान्''

यह गीताचार्य की उक्ति है - 'अदिति के पुत्रों में मैं ही विष्णु हूँ! प्रकाशमान ज्योतियों में मैं ही सूर्य हूँ।'

जब कभी अव्दितीय, कांतिपुंज के बारे में बताना हो, तब सूर्य भगवान प्रामाणिक व साक्षी बन जाते हैं। इसीलिए विश्ववाङ्मय में श्रीमन्नारायण के तेजस् की विशेषताओं को 'कोटिसूर्यसमप्रभा', 'सहस्रसूर्यकिरणतेजोविराजिता' आदि लाक्षणिक शब्दों के द्वारा मुखरित किया जाता है।

जिस भांति सभी इंद्रियों में नयन प्रधान होते हैं, उसी भांति इस प्रकृति या इस विराट विश्व के लिए सूर्य ही नेत्र है। भास्कर के असंख्य तेजोमय किरणों से समस्त विश्व प्रकाशमान रहता है। जब तक पथप्रदर्शन करानेवाली कांति नहीं हो, तब तक इन चर्मचक्षुओं की क्या ही सार्थकता रह जाती है? समस्त विश्व में अपने प्रकाश को फैलाकर, अनंत प्रकृति, भगवान की अद्भुत अपूर्व सृष्टि को यत्र-तत्र-सर्वत्र देखनेवाला सूर्यभगवान उस विराटस्वरूपा/विश्वव्यापी भगवान का नेत्र बनकर परोक्ष रूप से स्वयं भगवान बनकर समस्त विश्व से स्तुति प्राप्त करता है। समस्त (चौदह) लोकों में अनंतज्योतिपुंज सूरज अपने किरण जाल को फैलाकर, सौरमंडल के सभी ग्रहों को अपने चारों ओर परिभ्रमण करवानेवाले, रात-दिन, पक्ष, महीने, ऋतुओं, अयनों, वर्षों आदि के द्वारा प्रत्यक्ष देव श्री सूर्य भगवान कालगमन का दर्शन करवा रहे हैं।

जब हम अच्छा स्वास्थ्य रखते हैं, तब मानना चाहिए कि हमारे पास सब कुछ है। 'आरोग्यं भास्करादिच्चेत्' - यानी स्वास्थ्य के साथ-साथ सूर्यभगवान सब कुछ प्रदान करता है। श्री सूर्यनारायण नित्यप्रति स्तुत्य रहता है। प्रातःकाल में उदित होकर, समस्त चराचर को जगाते हुए, अपने गमन के द्वारा पूरी प्रकृति में संतुलन की रक्षा करते हुए, पूरे विश्व के लिए 'सर्वेंद्रियाणाम् नयनं प्रधानं' की भांति, कर्मसाक्षी बनकर नियमित ढंग से यह सूचित करते हुए कि 'समय का अतिक्रमण किसी के लिए संभव नहीं' कहते हुए कालगमन तथा काल तत्व को सभी के लिए दृग्योग्य बनाकर विश्वबंधु बनते हैं श्री सूर्यनारायण स्वामी।

अनंत तेजोद्दीप्त सकल देवता स्वरूपा प्रत्यक्षदैव श्री सूर्यनारायण स्वामी की स्तुति तथा आराधना करते कई महानुभावों ने अन्यान्य प्रकार से इष्टकाम्यार्थ की प्राप्ति की है। कलियुग में भूलोकवैकुंठवासी श्री वेंकटेश्वर स्वामी ने भगवान भास्कर की स्तुति कर अलमेलुमंगा (श्रीमहालक्ष्मी) को प्राप्त किया। सूर्यभगवान की प्रार्थना करके कुंतीदेवी ने जन्मतः प्राप्त सहज कवचकुंडलधारी कर्ण के पुत्र के रूप में प्राप्त किया। अरण्यवास के दौरान खाद्यसमस्या से मुक्त करने के लिए सूर्य भगवान ने धर्मराज को 'अक्षयपात्र' को प्रदान किया। राम का अग्रगण्य भक्त, भविष्यद्ब्रह्म, चिरंजीवि हनुमान ने सूर्यभगवान के पास विद्याध्ययन किया। श्रीराम ने सूर्यभगवान की स्तुति करके युद्ध में विजय प्राप्त किया। सूर्यभगवान की उपासना करके सत्राजित ने अनंत धाराप्रवाह सुवर्ण प्रदान करने वाले श्यमंतकमाणि को पाया था। याज्ञवल्क्यमहामुनि ने इसी सूर्य भगवान के पास रहकर शुक्ल यजुर्वेद का अध्ययन किया।

'रथसप्तमी' पर्व को 'सूर्यजयंती' भी कहा जाता है। उस दिन से सूर्यभगवान, अपने रथ को उत्तर दिशा की ओर हाँकते हैं। आशा करेंगे कि भविष्य में सूर्य भगवान श्रेष्ठतर स्वास्थ्य सभी चराचर को प्रदान करेंगे। रथसप्तमी के पुण्य दिवस को प्रातःकालीन सूर्यप्रभावाहन से प्रारंभ कर रात तक संपन्न होनेवाले सात वाहन सेवाओं में वेंकटाद्रि नारायण दर्शन प्रदान करते हैं। हे भक्तगण! आइए हम सभी उस वरप्रदाता का दर्शन कर कृतार्थी बनें...

ओम् नमो वेंकटेशाय

वन्दे कश्यपात्मजम्...

तेलुगु मूल - श्री सामवेदं षण्मुखशर्मा

हिन्दी अनुवाद - डॉ.जी.सुजाता

मोबाइल - ९४९४०६४११२

रथसप्तमी (०१ फरवरी २०२०) के संदर्भ में...

सप्ताश्वरथ मारूढ़ं प्रचंडं कश्यपात्मजम्।
श्वेतपद्मधरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम्॥

भारतीय संस्कृति ने सूर्याराधना को अत्यंत महत्वता प्रदान की है। आज सूरज की 'भौतिक शक्तियों' का अवलोकन करने का जो काम विज्ञानशास्त्र कर रही है, उस महाज्योति के दिव्य शक्तियों को हमारे 'वेद संस्कृति' युगों के पहले ही आविष्कृत कर चुकी है। हमारे धर्म में सूर्य के जितने भी नाम हैं, उन सभी का अर्थ जानने मात्र से, महर्षियों के ज्ञानदृष्टि को नमन किए बिना नही रह सकते।

आदित्य, सूर्य, रवि, मित्रा, भानु, खगा, पूषा, अर्यमा, मरीची, सविता, अर्क, भास्करा, प्रभाकरा, मार्ताण्डा... ऐसे कितने हीं नाम मन्त्रों के रूप में उपासित किये जा रहे हैं।

धरती के विविध जीव-जन्तुओं द्वारा ग्रहण करनेवाला 'सौरशक्ति', उनके आवश्यकताओं के अनुसार विभिन्नरूपों में होती है। यह केवल 'भौतिक रूप' है। इसके सूक्ष्म शक्तियों को विविध यन्त्र परिकरों के द्वारा जाँच करके, नई आविष्करण प्राप्त करना भी एक प्रकार से 'भौतिक रूप' ही माना जाता है। यह वैज्ञानिक विनियोग दृष्टि है। लेकिन आदित्य के अंदर की अद्भुत दैवीय अनुग्रह को केवल 'उपासना मार्ग' से ही प्राप्त कर सकते है। यह 'उपासना दृष्टि' है। और एक सूक्ष्मतम दृष्टि 'तात्त्विक दृष्टि' है। यह उपनिषदों में प्रतिपादित 'आत्मज्ञान' है। इस प्रकार चार रूपों में सौरमूर्ति को स्वीकार कर सकते हैं। हर एक अपने-अपने स्थाई के अनुसार उस कान्ति मूर्ति को प्राप्त कर रहे हैं।

हमारा वैदिक विज्ञान चार प्रकार के पहलुवों को दिखा रही है। भानु के विविध नामार्थ ही इस विषय को स्पष्ट करते हैं। हमारे प्राचीन शास्त्रों का आदर करते हुए, शुद्ध अंतःकरण से देखने पर इन विशेषताओं को जान सकते हैं।

सूर्य का भजन 'सप्ताश्वरथ मारूढ़ं' नाम से स्तोत्र करते हैं। इसका अर्थ, सात अश्वों के रथ पर सूर्य भगवान का सवार होना।

नामों पर विभिन्नता को देखेंगे -

रंहणशीलत्वात् रथः - गमन करना ही रथ की विशिष्टता है। गमन करना (प्रसरित होना) प्रकाश का विशिष्ट लक्षण है। इस प्रकाश का मूलस्त्रोत 'प्रभाकर' है। 'अश्व' का अर्थ है 'कान्ति किरण'। 'अशूव्याप्ता...' मतलब तुरन्त व्यापक होने की विशेषता। यही स्वभाव 'प्रकाश' का भी है। इसीलिए सूर्यकिरणों को ही 'अश्व' मानते हैं।

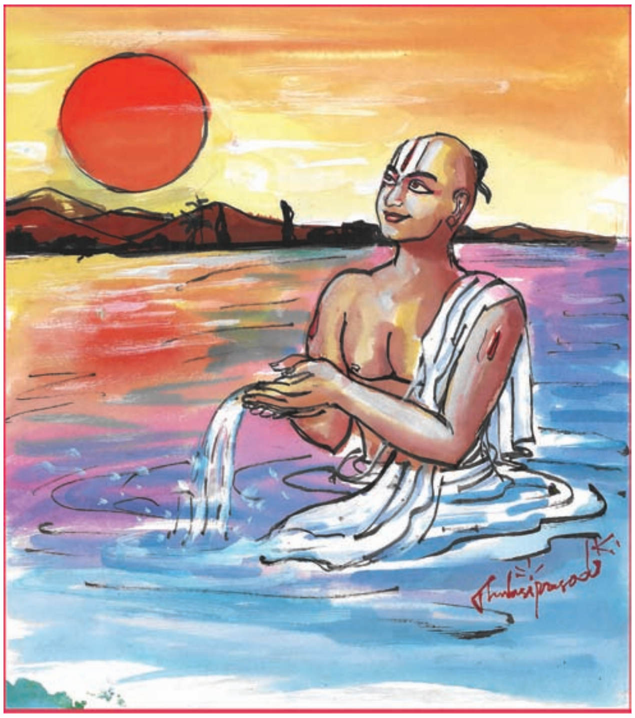

'एको अश्वो वहति सप्तनामा.....', वह एक ही 'अश्व' है जो 'सप्त' के रूप में व्यवस्थापित की गई है। यदि हम इसे ध्यान से देखे, तो हमारे शास्त्रों के आधार पर कई प्रकार के भावों को (अनुभूतियाँ) प्राप्त कर सकते हैं-

- एक ही सूर्यकान्ति.... जो शुद्ध वर्ण में होती है, वही विविध परिणामों की वजह से सप्तवर्णों में विभाजित हो रही है। यह सर्वविदित विषय है। ये सप्तवर्ण ही 'सप्ताश्व' है। यह वर्ण रूप कान्ति का स्वरूप है।

- हम सूर्योदय को अनुसरण करके दिनगणना करते है। दिन का कारक 'दिवाकर' ही है। ऐसे कई दिन मिलकर हफ्ते बनते हैं। ये सात दिनों का एक हफ्ता होती है। और इन्ही सात दिनों को सात अश्व बनाकर 'आदित्य' उन पर भ्रमण करते हैं।

- पुराणों के अनुसार 'सूर्य' के सप्ताश्वों के नाम- जया, अजया, विजया, जितप्राणा, जितश्रमा, मनोजवा, जितक्रोधा... (आधार - भविष्य पुराण)। ये सभी नाम कान्ति के प्रसारण की विविध दशाएँ हैं।

- हमारा धर्म सूर्य को वेदस्वरूप मानती है। हनुमान तथा याज्ञवल्क्य दोनों सूर्य की उपासना करके ही वेदज्ञानी बनें। वेद के छन्द सात हैं- गायत्री, त्रिष्टुप्, अनुष्टुप्, जगती, उष्णिक्, पंक्ती, बृहती।

- हमारे शरीर में चर्म, अस्थि, मांस, मज्ञा, रक्त, मेधा, शुक्र.... जैसे सप्त धातु हैं। इन सब से गमन करनेवाला रथ हमारा शरीर है। इन सबका निर्वाह करनेवाला अन्तर्यामि आदित्य रूपी परमात्मा है। इसी प्रकार हमारे मुख के दो नेत्र, दो नासिकाएँ, दो कान, एक मुह... इन सात ज्ञानेन्द्रियों को चलानेवाला बुद्धिस्वरूप चैतन्य भी यही सूर्य भगवान है।

- इन सात अश्वों के साथ चलनेवाले सूर्यकान्ति के विस्तार को ही 'सप्ताश्वरथ चलन' के रूप में हमारे वेदशास्त्रों ने निर्दिष्टित किया है।

इस जगत् को विकसित कराकर, जगाकर गतिशीलता प्रदान करनेवाला शक्ति का नाम है - 'पद्मिनी'। रोग का हरण करनेवाला प्रभात समय का शक्ति ही सुमंगलकारिणी 'उषादेवी'। सूर्य कान्ति के कारण ही हम चीजों को पहचान सकते हैं। यह 'संज्ञाशक्ति' है। प्रकाश से ही छाया का अस्तित्व है। छाया प्रदान करनेवाला प्रकाश ही 'छायादेवी' है।

ये चारों 'सूर्य' के प्रकाश के भिन्न रूप हैं। जो अविच्छिन्न शक्तियाँ हैं। ये शक्तियाँ ही सूर्य की पत्नियाँ है। ऐसे कितने ही विशेषताओं से भरपूर सप्ताश्वरथ स्थित सूर्य भगवान का आशीर्वाद हमारे ऊपर सदा बना रहें।

सर्वदेवात्मक - 'महाभारत' में भगवान श्रीकृष्ण ने उपदेश दिया कि प्रातःकाल स्नान करके, स्वच्छता से सूर्य को नमस्कार करने से, पापों का उन्मूलन होगा।

सौम्यता, तीक्षणता, प्रशांतता, प्रचंडता... ये सभी गुण हम सूर्य में देख सकते हैं। घोर-अघोर... इन दोनों से

विश्व को प्रभावित करनेवाला भी यही है। इसीलिए सूर्य को रुद्र, शिव तथा दिशाओं के पति के रूप में वेदों ने वर्णन किया।

- सूर्य से ही दिशाएँ बनती हैं। सूर्योदय की दिशा को पूर्वदिशा नाम देने के बाद ही, बाकी दिशाएँ तय करते हैं। इसलिए ''दिशांच पतये नमः'' करके श्रुतिमंत्र पढ़ते हैं। ये किरण ही इनको सहस्रकार है।

देना, पालना, शासन करना, कार्य करना ये सभी हमारे हाथ के लक्षण हैं। इन चार कार्यों के द्वारा सूर्य किरण विश्व को हित तथा रम्यता प्रदान करते हैं। इसलिए उन्हें 'हिरण्यबाहुवु' नाम से पूजते हैं।

विश्व के सकल चराचर जीवों को इन किरणों के द्वारा प्राणशक्ति प्रदान करने के कारण इन्हीं को 'विष्णु' नाम से बुलाते हैं। सूर्य किरणों की गमनता से 'गरुत्मन्त', किरणों पर अधिष्ठित हुए आदित्य को 'गरुडवाहनारूढ़' कहते हैं।

सूर्य की चैतन्य शक्ति पूरे विश्व को ऐश्वर्य प्रदान कर रही है। इसलिए हम उस सौर शक्ति को लक्ष्मी, पराशक्ति, जगदाम्बा आदि नामों से आराधना करते हैं।

सूर्य किरण सौम्य हो या तीक्षण, वे हमारे लिए मंगलदायक हैं। इसलिए उन्हें 'शिव' (मंगलमय) कह कर प्रार्थना करते हैं। ''आदित्यंच शिवं विद्याते'' - ऐसा शास्त्र उवाचा।

सारी सृष्टि को प्राणशक्ति प्रदान करता है इसलिए वह 'ब्रह्म' है। स्थिति, पोषण को प्रसार करनेवाले भगवान श्रीहरि। सर्वजीव समूह ही 'नारम्' है, उसे शक्ति देनेवाला आश्रय शक्ति (आयनम्) वे ही है, इसीलिए वे 'सूर्यनारायण' है।

'इन्धी दीप्ता' 'इदि ऐश्वर्ये' इन संस्कृत धातुवों के अनुसार, प्रकाश, ऐश्वर्य लक्षणों के कारण सूर्य को 'इन्द्र' कहते हैं।

किरणों के चिकनापन को 'मित्रा', पोषण शक्ति को 'पूषा', आर्द्रता को 'वरुणा'। ये सभी देवताएँ सौरशक्ति की ही विशेषताएँ हैं। इसलिए वेदमंत्र ''एकं सत् विप्राः बहुधा वदन्ति'', सूर्य केलिए ही बताया गया।

सर्व देवता स्वरूप सूर्य की प्रकाश शक्ति को ही दाहक (आग लगानेवाला) शक्ति बनाकर, यज्ञ करने के लिए अग्नि का प्रज्वलन करके, सर्व देवताओं की आराधना करना, हमारी यज्ञ संस्कृति है।

उत्तरायण की पुण्यतिथि पर सूर्यकिरणों के गमन को ही 'रथ की दिशा' बदलना कहते हुए, सात संख्या

की प्रधानता के कारण 'सप्तमि तिथि' को 'रथसप्तमी' के रूप में मानकर, सूर्य की आराधना करना हमारा संप्रदाय है।

सप्ताह में पहला दिन 'रविवार', तिथियों में 'सप्तमी'- दोनों सूर्याराधना के लिए प्रशस्त है। वैज्ञानिक दृष्टि से तथा आध्यात्मिक दृष्टि से सूर्य नमस्कार एवं सूर्याराधना दोनों हमारे भव्य संस्कृति की उपलब्धि हैं।

प्रत्यक्ष दैव को प्रणाम - आँखों देखा महान जल संपदा से फसल कैसे उगाना है, एक छोटी सी वृक्ष से औषध की उत्पत्ति कैसे करना है... यह विज्ञान है। ऐसे ज्ञान से समृद्ध प्राचीन भारतीय महर्षियों ने, सौरशक्ति में छिपे हुए दैवीचैतन्य को ग्रहण करने के अनेक पद्धतियों को सिखाया।

स्कन्दपुराण के अनुसार, दिवोदास नामक राजा ने सूर्य किरणों के कारण ही चावल पकाया। सूर्य की उपासना से धर्मराजा ने अक्षयपात्र को प्राप्त करके, अपने गृहस्थ धर्म को निभाते हुए, शरण में आये अतिथियों को भोजन प्रदान कर सका। 'सांब' (श्रीकृष्ण के पुत्र) भास्कराराधना से कोढ़ रोग से विमुक्ति हुए। ऐतिहासिक रूप से 'मयूर' नामक संस्कृत कवि ने 'सूर्यशतक' की रचना करके, संपूर्ण स्वास्थ्य प्राप्त किया, ऐसा साहितिलोक में कहा जाता है।

रामायण की 'युद्धकाण्ड' के अनुसार, दिवाकर की उपासना करके, सीतादेवी ने चित्त शांति प्राप्त की। भगवान श्रीरामजी ने अगस्त्य महर्षि के द्वारा 'आदित्य हृदय' से मार्गदर्शन प्राप्त कर, रावण का संहरण करके, विजय प्राप्त की। यह बात रामायण में स्पष्ट रूप से बताया गया है। भविष्यपुराण में सात अध्यायोंवाला एक और 'आदित्य हृदय' ग्रन्थ उपलब्ध है। जिसमें स्वयं श्रीकृष्ण ने अर्जुन को उपदेश दिया। सूर्योपासना करने से धनप्राप्त होती है- इसका सबूत ''सत्राजित्त श्यमंतकमणि'' की कहानी है।

अष्टवसुवु, एकादश रुद्र, सप्तमरुत्त, द्वादशादित्य, इन्द्रादि दिक्पालक, पितृदेवताएँ, चौदह मनु, साध्य, अश्विनी देवताएँ - ये सभी सौरशक्ति की ही विशेषताएँ हैं। सभी पुराणों में 'आदित्योपासना' के बारे में उल्लेख होने के अलावा, 'आदित्य पुराण' नाम से एक अलग 'उपपुराण' भी उपलब्ध है। इतवार के व्रत, सप्तमी पूजा, संक्रमण पर्व इसके प्रमुख विषय हैं। सूर्य, 'नमस्कार प्रेमी' तथा 'अर्घ्य प्रेमी' है। सूर्योदय का पूर्व समय 'उषःकाल' के रूप में विख्यात है। इस समय के दैवीशक्तियों के बारे में हमारे ग्रन्थों में विभिन्न प्रकार के वर्णन मिलते हैं। प्रमुख रूप से उत्तरायण पुण्यकाल में प्रसन्न रूप से सूर्यकिरण प्रसारित होने के कारण माघमास आदित्य भगवान की आराधना के लिए प्रशस्त है।

ज्योतिष शास्त्र के अनुसार आदित्य की अधिदेवता रुद्र है। इसीलिए माघमास के शिवरात्रि (बहुल चतुर्थशी) 'महाशिवरात्रि' के नाम से ख्याति प्राप्त की।

श्री गोविंदाचार्य स्वामीजी (एम्बार)

इस वर्ष का अवतार उत्सव
दि. ७ फरवरी २०२०

- श्री नरसिंग खेंखा
मोबाइल - ९३४८६५५२२०

***रा**मानुज पदच्छाया गोविन्दह्वानपायिनी।*

तदायत्तस्वरूपा सा जीयान्मद्विश्रमस्थली।।

तिरुनक्षत्र - पुनर्वसु नक्षत्र, पुष्य मास

अवतार स्थल - मधुरमंगलम

आचार्य - श्री शैलपूर्ण स्वामीजी

शिष्य - श्री पराशर भट्टर, श्री वेदव्यास भट्टर

परमपद स्थल - श्रीरंगम्

रचना - विज्ञान स्तुति, एम्पेरुमानार वडि वळगु पासुर (पंक्ति)

अवतार

श्री गोविंदाचार्य कमलनयन भट्टर और द्युतिमती के पुत्र हुए। इनका अवतार मधुरमंगलम में हुआ। ये श्रीरामानुजस्वामीजी के मौसेरे भाई भी हैं। गोविन्दभट्टर, गोविन्ददास, गोविन्द पेरुमाळ, एम्बार और रामानुज पदच्छाया के नामों से भी जाने जाते हैं।

श्रीरामानुजस्वामीजी की रक्षा

एक दिन यादवप्रकाश ने रामानुजाचार्य का छल से वध करने हेतु गंगा स्नान के लिये प्रयाग चलने के लिये आमन्त्रित किया। माता से आज्ञा लेकर श्रीरामानुजाचार्य यादवप्रकाश के साथ चल दिये। श्री गोविंदाचार्यजी को यादवप्रकाश की योजना का पता था, अतः रामानुजाचार्य की रक्षा करने हेतु वे भी साथ में चल दिये। गोविंदाचार्य ने रामानुजाचार्य को बताया, ''भैय्या! गंगा स्नान के बहाने आपको मारने के लिये लेके जा रहे हैं, अतः आप यहाँ से निकल जाना चाहिए। श्रीरामानुजाचार्य वहाँ से यादवप्रकाश का साथ छोडकर निकल गये।

श्रीशैलपूर्णाचार्य स्वामी का गोविन्दाचार्यजी को श्रीवैष्णव बनाना

श्री गोविन्दाचार्य माया से प्रभावित होकर श्रीकालहस्ति में शिव आराधना करने लगे थे। उनके उज्ञीवनार्थ रामानुजाचार्य श्रीशैलपूर्णाचार्य को पत्र लिखे। श्रीशैलपूर्णाचार्य कुछ शिष्यों के साथ श्रीकालहस्ति के लिए प्रस्थान किये। जिस जलाशय में गोविन्दाचार्य प्रतिदिन शिव आराधना के लिए जल लेने आते थे उस सुवर्णमुखरी जलाशय के किनारे श्रीशैलपूर्णाचार्य स्वामीजी सहस्रगीति का कालक्षेप सुनाने लगे। वहीं शिवजी की सेवा के लिये पुष्प चुनने गोविन्दाचार्य आये और १४वें गाथा में सुनें, ''जिन भगवान विष्णु के नाभि कमल से ब्रह्म उत्पन्न होते हैं, जो चराचर समस्त जगत् के एक मात्र कारण हैं, जो समस्त कल्याणगुणगुणाकर अखिलहेय प्रत्यनीक दो चिह्नों को धारण करते हैं उनको छोड़कर दूसरे देवता की पूजा के लिये पुष्प चयन उचित नही है।''

तत्पश्चात् श्रीशैलपूर्णाचार्य ने आलवन्दार स्तोत्र का एक श्लोक **''स्वाभाविकानवधिकातिशयेशितृत्वं नारायणः त्वयिन मृष्यति वैदिक कः ब्रह्म शिवः शतमखः परमस्वराड़ित्येतेऽपि यस्य महिमार्णवविप्रुषस्ते''** लिखकर गोविन्दाचार्य के मार्ग में डाल दिया। इस श्लोक से गोविन्दाचार्य

अत्यन्त प्रभावित हुये तथा उनमें जिज्ञासा जागृत हुयी। उनका श्री शैलपूर्ण स्वामीजी के साथ संवाद हुआ। संवाद में निरुत्तर होकर गोविंदाचार्य ने त्वरीत उन पुष्पों को फेंककर श्रीशैलपूर्णाचार्य स्वामीजी के चरणों में गिराकर कहने लगें, ''मैं भटक गया हूँ।''

इतर शिवभक्तों ने बुलाने पर भी गोविंदाचार्य उनके साथ नही गये। उन शिवभक्तों ने श्रीशैलपूर्णाचार्य स्वामीजी का विरोध किया। उसी रात्रि में शिवजी उन शिवभक्तों के स्वप्न में आकर यह आदेश दिये की, **''आज पृथ्वी पर शेषजी के अंश में रामानुजाचार्य, गरुडजी के अंश से गोविंदाचार्य और पाञ्चजन्य के अंश से दाशरथि अवतार लिये हैं।''**

यह बात शिवभक्तों ने श्रीशैलपूर्णाचार्य से क्षमा याचना करते हुये सहर्ष उन्हें गोविंदाचार्य को सौंप दिया। तत्पश्चात् श्रीशैलपूर्णाचार्य स्वामीजी श्री गोविंदाचार्य का विधिवत् पंच संस्कार करके, सहस्रगीति का अध्ययन कराकर अर्थपंचक विज्ञान को बतलाये।

श्री गोविन्दाचार्य की जीव दया

एक बार रामानुजाचार्य ने गोविन्दाचार्य को साँप के मुँह में हाथ डालते देखा। पूछने पर उन्होंने बताया की उस साँप के जीभ में काँटा गड गया था वह निकालने के लिये मुँह में हाथ डाला। इतनी महती दया भाव देखकर रामानुजाचार्य अत्यन्त प्रसन्न हुये।

श्री गोविन्दाचार्य स्वामीजी की आचार्य निष्ठा

१. एक बार कुछ श्रीवैष्णव गोविंदाचार्य की स्तुति कर रहे थे और गोविंदाचार्य उस स्तुति का आनन्द लेते हुए श्रीरामानुजस्वामीजी की नज़र में आए। श्रीरामानुजस्वामीजी ने उन्हें बताया की अपनी प्रशंसा कभी स्वीकार नहीं करनी चाहिए और अपने आप को तुच्छ समझना चाहिए। श्री गोविंदाचार्य ने उत्तर दिया की किसी ने उनकी स्तुति की तो वो स्तुति उन्हें नहीं बल्कि रामानुजस्वामीजी को जाती हैं क्योंकि श्रीरामानुजस्वामीजी से ही उन्हें सबकुछ प्राप्त हुआ है। श्रीरामानुजस्वामीजी उनके वचन स्वीकार करते हैं और उनकी आचार्य निष्ठा की प्रशंसा करते हैं।

२. पेरियाळ्वार तिरुमोळि के अंतिम पाशुर का अर्थ श्रीवैष्णव उनसे पूछते हैं तो वें अपने को अज्ञानी बताकर श्रीरामानुजस्वामीजी के श्रीपाद अपने मस्तक पर धारण करते हैं और उस पाशुर का अर्थ प्रकाशित करते हैं।

३. श्रीरामानुजस्वामीजी एक बार सहस्रगीती के अर्थ को स्मरण करते हुये टहल रहे थे। उन्हें देखनी मात्र से श्रीगोविन्दाचार्यस्वामीजी ने श्रीरामानुजस्वामीजी किसका ध्यान कर रहे थे यह जान लिया। इससे यह समझ आता है की श्री गोविन्दाचार्य स्वामीजी अपने आचार्य के चिंतन में दिन रात रहते हैं।

४. एक बार जब श्रीरामानुजस्वामीजी श्रीशैलपूर्ण स्वामीजी के दर्शन के लिए पधारे तो श्रीरामानुजाचार्य ने देखा की गोविंदाचार्य श्रीशैलपूर्णाचार्य की शय्या लगाकर उस पर प्रथम स्वयं सो लेते हैं। उनसे पूछने पर उन्होंने बताया की गुरु की शय्या पर सोने का फल नरक होता है, परंतु मेरे द्वारा लगाई गयी शय्या पर गुरुदेव को रात्रिभर बिना किसी क्लेश के अच्छी नींद आये तो मुझे नरक ही हो तो हानि नहीं।

श्री गोविन्दाचार्य का आचार्य विरह

रामानुजाचार्य ने श्रीरंगम् के लिए प्रस्थान करते समय गोविन्दाचार्य को शैलपूर्ण स्वामीजी से माँगकर साथ लेलिया। एक बार गुरु के विरह में गोविन्दाचार्य के सूखे हुये अंगों को देखकर यतिराज ने उन्हें श्रीशैलपूर्णाचार्य का दर्शन करके आने के लिये कहा। श्रीशैलपूर्णाचार्य स्वामीजी ने

उन्हे दर्शन न देकर रामानुजाचार्य की सेवा में ही पूर्णनिष्ठा भाव से रहने की कठोर आज्ञा दी। फिर गोविन्दाचार्य श्रीरंगम् लौट आये। गुरुदेव की सेवा ही भगवत सेवातुल्य माननेवाले श्री गोविन्दाचार्य श्रीशैलपूर्णाचार्य स्वामीजी का स्मरण करके उनके समान ही श्रीरामानुजाचार्य में श्रद्धा रखते हुये अनन्य भाव से उनकी अहर्निश सेवा करने लगे।

श्री गोविन्दाचार्य की विरक्ति और सन्यास ग्रहण

एक बार गोविन्दाचार्य की माँ आकर उनसे कहने लगी की अब तुम्हारी पत्नी ऋतुमति हुयी है अतः तुम घर चलो। यतिराज की सेवा में संलग्न गोविन्दाचार्य नही माने तो उनकी माँ ने यह बात रामानुजाचार्य से बताई। रामानुजाचार्य ने उन्हें आश्रम धर्म का पालन आवश्यक बताते हुये पत्नी के साथ अंधकार में एकान्तवास करने की आज्ञा प्रदान की। गुरु आज्ञा पाकर घर तो आगये किन्तु पत्नी के साथ रात्रिभर ज्ञान वैराग्य की बातें करते रहें। रामानुजाचार्य ने कारण पूछा तो गोविन्दाचार्य बोले की ''अन्तर्यामी भगवान के प्रकाश से रात्रिभर अन्धकार का नामोनिशान नही रहा।'' रामानुजाचार्य बोले की, ''आश्रमधर्म का पालन करना चाहिये। गृहस्थ धर्मोपयोगी भोग्य वस्तुओं में भोग्यता बुद्धि न करके कैंकर्य बुद्धि करनी चाहिये। अनाश्रमी पतित हो जाता है। यदि गृहस्थ आश्रम धर्म में विरक्ति हो गयी है तो आपको शीघ्र ही सन्यास लेना चाहिये।''

गोविन्दाचार्य के सन्यास के लिये प्रार्थना करने पर उनकी सन्यासाश्रम में निष्ठा देखकर रामानुजाचार्य ने उन्हें सन्यासाश्रम में दीक्षित किया। ''मन्नाथ'' नाम से विभूषित किया। मन्नाथ यह रामानुजाचार्य का नाम होने से गोविन्दाचार्य ने इस नाम को स्वीकार नहीं किया। फिर रामानुजाचार्य मन्नाथ का ही पर्याय 'एम्बार' यह नाम गोविन्दाचार्य को प्रदान किया।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति।

लेखक लेखिकाओं से निवेदन

सप्तगिरि पत्रिका में प्रकाशन के लिए लेख, कविता, रचनाओं को भेजनेवाले महोदय निम्नलिखित विषयों पर ध्यान दें।

१. लेख, कविता, रचना, अध्यात्म, दैव मंदिर, भक्ति साहित्य विषयों से संबंधित हों।

२. कागज के एक ही ओर लिखना होगा। अक्षरों को स्पष्ट व साफ लिखिए या टैप करके मूलप्रति डाक या ई-मेइल (hindisubeditor@gmail.com) से भेजें।

३. किसी विशिष्ट त्यौहार से संबंधित रचनायें प्रकाशन के लिए ३ महीने के पहले ही हमारे कार्यालय में पहुँचा दें।

४. रचना के साथ लेखक धृवीकरण पत्र भी भेजना जरूरी है। 'यह रचना मौलिक है तथा किसी अन्य पत्रिका में मुद्रित नहीं है।'

५. रचनाओं को मुद्रित करने का अंतिम निर्णय प्रधान संपादक कार्य होगा। इसके बारे में कोई उत्तर प्रत्युत्तर नहीं किया जा सकता है।

६. मुद्रित रचना के लिए परिश्रमिक (Remuneration) भेजा जाता है। इसके लिए लेखक-लेखिकाएँ अपना बैंक प्रथम पृष्ठ जिराक्स (Bank name, Account number, IFSC Code) रचना के साथ जोड करके भेजना अनिवार्य है।

७. धारावाहिक लेखों (Serial article) का भी प्रकाशन किया जाता है। अपनी रचनाओं का भेजनेवाला पता-

प्रधान संपादक,
सप्तगिरि कार्यालय,
ति.ति.दे.प्रेस कांपौन्ड, के.टी.रोड,
तिरुपति – ५१७ ५०७. चित्तूर जिला।

श्री भक्तिसार स्वामीजी

इस वर्ष का अवतार उत्सव
दि. १० फरवरी २०२०

- श्रीमती उषादेवी अगर्वाल
मोबाइल - ९९०३३८८००५

*मघायां मकरे मासे, चक्रांश भार्गवोद्भवम्।
महीसार पुराधीश भक्तिसार महँ भजे।।*

तिरुनक्षत्र - मघा नक्षत्र, मकर मास

अवतार स्थल - महिसारपुरम (तिरुमलिशै)

आचार्य - श्री विश्वक्सेनजी, श्री महद्‌योगी स्वामीजी

शिष्य - श्री कणीकृष्ण स्वामीजी

परमपद स्थल - कुंभकोणम

भगवान श्रीकृष्ण ने जैसे कारागार में जन्म लेकर गोकुल में लालन पालन संवर्धन प्राप्त किया वैसे ही श्री भक्तिसार स्वामीजी का अवतार हुआ। भार्गव ऋषि के द्वारा कनकांगी के गर्भ से वैभव नामक संवत्सर के मकर मास की कृष्णपक्ष दशमी, गुरुवार, मघा नक्षत्र के दिन तुला लग्न में भगवान के श्री सुदर्शन चक्र के अंश से श्री भक्तिसार स्वामीजी का अवतार हुआ और बेंत के सामान बनाने वाले के गृह में उनका लालन पोषण हुआ। बिना दुग्धपान एवं अन्य किसी प्रकार का आहार लिये, यह बालक सदैव परमानन्द रत रहकर भगवान का गुणानुवाद करता हुआ, प्रातःकालीन सूर्य की भाँति दिनोदिन बढ़ने लगा और भक्तिसार के नाम से संसार में प्रसिद्ध हुआ।

श्री महद्‌योगी स्वामीजी के द्वारा तत्त्वोपदेश

भक्तिसार स्वामीजी को भगवत प्राप्ति की चिंता सताने लगी। तब उन्होंने अनेक मत एवं शास्त्रों का अवलोकन करके यह निश्चय किया कि सभी मत सारहीन है और अंततोगत्वा वे शैवमत में दीक्षित हो गए। भगवान की कृपा से श्री महद्‌योगी ने उनके वृत्तांत को सुनकर उन्हें शिक्षा देने की अभिलाषा की। श्री महद्‌योगी स्वामीजी ने कहा कि जगत कारण परब्रह्म परमात्मा को न जानने से आप इधर उधर भटक रहे है। तब शिव भक्त श्री भक्तिसार यह सुनकर बोले कि ‘‘आप स्वयं को तत्त्वज्ञ एवं मुझको तत्त्व से अनभिज्ञ कर रहे है। तब श्री महद्‌योगी स्वामीजी ने समझाया कि परतत्त्व कौन हो सकते है और कौन नहीं?

शिवजी भस्म और बाघ का चर्म धारण करते है एवं रुद्राक्ष की माला पहनते है तथा उनकी जटाये बढ़ी हुई है। ब्रह्म की आकृति यज्ञीय स्त्रुवा और कुशाओं से संयुक्त हाथवाली, समस्त पावन तीर्थों के जल से पूरित कमंडलु वाली, अक्षमाला से विभूषित, वेदपाठ संपन्न और श्रीरंगधाम की सेवा में संलग्न महनीय का ध्यान करने वाली है। उपर्युक्त शिव एवं ब्रह्म कि आकृतियों से ज्ञात होता है की इनकी इच्छा पूर्ण नहीं हुई है। चंदन चर्चित अंग, दोनों तरफ श्रीदेवी भूदेवी शोभायमान, भुजपाश में लक्ष्मीजी सुशोभित, किरीट, नूपुर आदि आभूषणों से विभूषित सुंदर शरीर, कुंतल केश युक्त भगवान श्री विष्णु कि आकृति है। शास्त्रों का मनोयोग पूर्वक विचार एवं मंथन करने से यह ज्ञात होता है कि परतत्त्व भगवान श्री लक्ष्मीनारायण ही है।

इस प्रकार श्री महद्‌योगी ने पराशरादि मुनियों के समान शास्त्रार्थ की रीति से तर्कयुक्त अनेकों वैदिक एवं शास्त्रीय प्रमाण देकर श्रीमन्नारायण ही परात्पर वस्तु है, यह निर्णय किया, जिसको श्रवण कर संशयों से रहित एवं संतुष्ट होकर श्री भक्तिसारयोगीजी उनके शिष्य बन गये। श्री महद्‌योगी ने विश्वक्सेन भगवान की कृपा से श्री भक्तिसारयोगी का समाश्रयन किया और अष्टांगयोग तथा शरणागति की शिक्षा प्रदान की।

श्री भक्तिसार सूरी का रुद्र को पराजित करना

एक बार शिवजी एवं पार्वती आकाश भ्रमण कर रहे थे, तब श्री सूरी का अपरिमित प्रभाव देखकर श्री पार्वतीजी ने श्री शंकरजी से श्री सूरी का प्रभाव जानने और उनके सन्नीकट में आने की इच्छा व्यक्त की। तदनंतर शंकरजी एवं पार्वतीजी ने वहाँ पर पधारकर अभीष्ट वरदान देने की इच्छा जताई। इस पर श्री सूरी बोले कि मुझे आपसे कोई प्रयोजन नहीं है। इस पर शंकरजी को महान क्रोध हुआ और श्री सूरी को भस्म कर देने की इच्छा से अपने तीसरे नेत्र को खोलकर प्रलयंकारी दाह को उन्होंने उत्पन्न किया। रुद्र के तीसरे नेत्र से उत्पन्न उस दाह को देखकर श्री सूरी ने अपने दाहिने पैर के अंगूठे से त्रैलोक्य को भी भस्म कर देने वाले दाह को उत्पन्न किया जो श्री शंकर के नेत्र से उत्पन्न दाह से करोड़ों गुणा अधिक थी। श्री सूरी द्वारा उत्पन्न इस दाह के कारण श्री रुद्र, पार्वती के साथ अपने को अत्यंत व्याकुल अनुभव करने लगे।

श्री सूरी के इस प्रभाव को देखकर रुद्र को अत्यंत आश्चर्य हुआ और प्रसन्नता भी हुई। उन्होंने उनका नाम भक्तिसार रखा और उनकी बारम्बार प्रशंसा करके पार्वती से बोले कि **''भागवतों का प्रभाव वर्णनातीत होता है। अतः हे गिरिजे भागवत त्रैलोक्य में दुर्जेय होते है।''**

श्री भक्तिसार योगी का प्रभाव -

१. श्री भक्तिसार योगी के विलक्षण वैभव को सुनकर एक समय में आयुर्वेद रस शास्त्र के अद्भुत विद्वान ''श्रीकोंकन सिद्ध' उनके समीप आये और इस शास्त्र के अनुसार अपने द्वारा निर्मित की हुई सिद्ध गुटिका उनको भेंट की। श्री भक्तिसार योगी ने इस परम गुटिका के गुणों के संबंध में पूछा तो कोंकण सिद्ध बोले की इसके स्पर्श मात्र से ही लोह स्वर्ण बन जाता है। सिद्ध के मुख से गुटिका की प्रशंसा सुनकर स्वामीजी ने उस गुटिका की उपेक्षा करते हुए अपने हाथों से अपने शरीर को मला और उससे निकली हुई मैल की गोली बनाकर कोंकण सिद्ध को देते हुए कहा कि इस गुटिका के संस्पर्श से पत्थर भी सोना बन जाता है। योगिराज ने इस गुटिका की परीक्षा लेने के लिये उसे सामने के पर्वत पर फेंक दिया और उसके स्पर्श मात्र से वह पर्वत सोने का बन गया। इस सुवर्ण गिरी को देखकर कोंकण सिद्ध विस्मित हुए और अपनी सिद्धि का अभिमान तज कर उनको प्रणाम कर वहाँ से चल गये।

२. अपने जन्म स्थल महिसार में तिलक करने की श्वेत मृतिका का अभाव देखकर भक्तों के अभीष्ट की पूर्ति करनेवाले दयानिधान श्री वेंकटेश भगवान आपके सन्मुख उपस्थित हो गये और उन्होंने कहा कि ''हे योगीन! कांचीपुरी में सरोयोगी आल्वार के जन्म स्थल की श्वेत मृत्तिका से ऊर्ध्वपुंड्र धारण कीजिये। भगवान की आज्ञा को शिरोधारी कर योगिराज कांचीपुरी गये और वहाँ की मृत्तिका से तिलक धारण करके भूसार क्षेत्र में

आये, और यहाँ श्री जगन्नाथ भगवान को प्रणाम कर अष्टांग योग साधना में कुछ समय बिताया।

३. योगिराज ने एक समय में भगवान को प्रणाम कर लोकानुग्रह में तत्पर हो उनसे विज्ञापन किया कि ''आप मेरे लिये तथा सभी प्राणियों के लिये सदा प्रत्यक्ष होते हुए, सर्वदा यहीं पर निवास कीजिये।'' **भगवान श्रीमन्नारायण भक्तिसार की प्रार्थना को स्वीकार कर आज तक कांचीपुरी में विराजमान है। सब जगह भगवान विष्णु दाहिनी करवट से सोते है परंतु यहाँ कांची में भक्त भक्तिसार के लिये भगवान श्री यथोक्तकारी बाएँ भाग से शयन कर रहे है।**

४. एक बार कुंभकोणम मंदिर के दीक्षितजी ने उनको यज्ञशाला में विप्रमंडली के बीच उनको उच्चासन पर बैठाकर उनकी पूजा की। जिससे वहाँ के प्रमुख जन क्रोधित होगए। तब भक्तिसार स्वामीजी ने अपने हृदय कमल स्थित शेषशायी शंख चक्र आयुधों से विभूषित भगवान का ध्यान किया। भक्त के द्वारा प्रार्थित भगवान श्रीपति भक्तिसार के शिरोभाग के मध्य में प्रकट हो गए, जगत्पति भगवान को प्रत्यक्ष देखकर सभी ने साष्टांग प्रणाम किया और विरोध करने वाले, योगिराज के चरणों पर गिरकर अपने अपराध के लिए क्षमा याचना किये।

स्वामीजी श्री सीतारामाचार्यजी महाराज, वैकुंठ मंडप, अयोध्या द्वारा रचित छन्द

श्री भक्तिसार प्रचार भक्ति ज्ञान के करतार हो,
कणीकृष्ण के आचार्य श्रीपति चक्र के अवतार हो।
आलवार लखी निष्ठा तुम्हारी चकित गिरिजापति भये,
तुम स्वामी भुजवा भामिनी को सिद्ध सुर कामिनी किये।।

भक्तिसार स्वामीजी ने २ दिव्यप्रबंधों की रचना की जिसमें २१६ गाथाएँ है। प्रथम प्रबंध चतुर्मुखादी नाम से प्रसिद्ध है जिसमें ९६ गाथायें है और दूसरा श्री चंद्रवृत के नाम से विख्यात है जिसमें १२० गाथाएँ है। भक्तिसार स्वामीजी ने इसमें ११ निम्नलिखित दिव्यस्थलों की प्रशंसा की है। १) श्रीरंगम् २) वेंकटाद्रि ३) विक्षारण्य ४) कांची के यथोक्तकारि भगवान ५) ज्ञानगेह ६) शेषगेह ७) कैर्वनी के श्रीपार्थसारथी ८) कुम्भकोण ९) कपिस्थान में श्रीगर्जतीहार १०) प्रेमपुर में श्री सुंदरराग ११) महापुर।

हृदय कमल में भक्ति सहित निरंतर भगवान का ध्यान करते हुए भक्तिसार स्वामीजी ने २३०० साल तक कुंभकोणम में निवास किया एवं ३७०० वर्ष तक भूतल पर निवास किया। इससे पूर्व उन्होंने १००० वर्ष तक का समय अन्यान्य स्थलों में प्रचार किया। **उन्होंने आजीवन अन्नादि आहार का परित्याग कर मात्र दुग्धाहार ही ग्रहण किया।**

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति।

गोदाता को सूचना

१) तिरुपति में स्थित ति.ति.देवस्थान के संबंधित श्री वेंकटेश्वर गो संरक्षण शाला में देशवाली गाय मात्र ही को पूर्वानुमति से स्वीकारते हैं।

२) स्वस्थ और ठीक रहने वाली देशवाली गो जाति मात्र ही को स्वीकारते हैं।

गोसंरक्षणाधिकारी,
ति.ति.दे., तिरुपति।

श्री कल्याण वेंकटेश्वरस्वामीजी का मंदिर, श्रीनिवासमंगापुरम्

यह लेख ति.ति.दे. द्वारा मुद्रित 'नित्यकल्याण श्रीनिवासमंगापुरम्' (२०१३), श्री जे.बालसुब्रह्मण्यमूजी से विरचित तेलुगु ग्रंथ के अनुसार ग्रहण किया है।

हिन्दी अनुवाद - डॉ.जी.मोहन नायुडु
मोबाइल - ९४४१४८०४७३

तिरुपति के पश्चिम में १० कि.मी. की दूरी पर मदनपल्ली प्रधानमार्ग के समीप एक छोटा-सा गाँव प्राचीन काल में सिद्धकुटि, श्रीनिवासपुरम्, अलिवेलुमंगापुरम् आदि नामों से प्रचलित था। यह स्थल कोट्टाला नामक क्षेत्र से सम्बन्धित था। वैकुंठवलनाडु (चन्द्रगिरि) तालूक (प्रखण्ड), तिरुवेलकुट्टम् (तिरुमल-तिरुपति) जिला १९ ई.वीं. सदी से संबंधित तरिगोंडवेंगमांबा के दानशिलालेख में श्यामला वन से युक्त 'नागपट्ला' इसका केंद्र स्थान था। स्वर्णमुखी नदी की उपनदी कल्याणी (विकल्य) के तट पर यह बसा हुआ है।

स्थल पुराण - अगस्त्य मुनि श्रीनिवासमंगापुरम् के आस-पास के स्वर्णमुखी नदी के तट पर एक सुन्दर आश्रम का निर्माण करवाकर उस आश्रम में रहते थे। एक दिन नवविवाहित दम्पतियों श्रीनिवास और पद्मावती मंगलवस्त्रों सहित वराह क्षेत्र की ओर जाते हुए अगस्त्यमुनि के आश्रम में आये थे। यहाँ के मुनि अगस्त्य ने आशीर्वाद देते हुए आत्मीयता के साथ कहा कि आप मंगलवस्त्रों सहित पहाड चढ़ना उचित नहीं है और छः (६) महीने तक इसी क्षेत्र में निवास कीजिए तब श्रीनिवासजी ने मुनि के आदेशों को स्वीकार किया।

श्रीनिवासमंगापुरम् का वातावरण मनो-उल्लास से युक्त रहता है। यहाँ से तिरुमल पहुँचने के लिए श्रीवारिमेट्टु (सीढी) से ही उपयुक्त पैदल मार्ग है। शेषाचल पहाड़ों के सौन्दर्य का आस्वादन करते हुए छः महीने बीत गए और श्रीनिवासजी, मुनि के अनुमति लेकर पद्मावती समेत श्रीवारिमेट्टु द्वारा तिरुमल पहुँचे। इस प्रकार श्रीवारिमेट्लु, अम्मवारि कालि मेट्लु इन दोनों के पादपद्मों के स्पर्श से यह सीढ़ियों का मार्ग बहुत पवित्र बन गया। इसके बाद चंद्रगिरि राज्य के कई शासक चंद्रगिरि दुर्ग से श्रीवारि मंदिर तक व्याप्त इस सरल मार्ग के द्वारा स्वामीजी का दर्शन कर धन्य हुए।

श्रीनिवासमंगापुरम् मंदिर की उत्तर दिशा में छः किलोमीटर की दूरी पर स्थित यह सीढ़ियों का मार्ग आरम्भ होकर तिरुमल तक व्याप्त है। इसी मार्ग को 'श्रीवारिमेट्टु'

या 'श्रीपतिमेट्टु' कहते है। आध्यात्मिक विकास के लिए यह मार्ग प्रथम सीढ़ी है। यह सोपान मार्ग चंद्रगिरि की ओर है। इसलिए यह 'चंद्रगिरि सोपान मार्ग' नाम से भी प्रसिद्ध है।

स्वयं पद्मावती श्रीनिवास के दिव्य चरण कमलों के स्पर्श से पुनीत यह मार्ग ही 'श्रीवारिमेट्टु' मार्ग है। वराहस्वामीजी की सन्नधि में तोंडमान राजा द्वारा निर्मित आनंदनिलय के विमान भवन में श्री पद्मावती, श्रीनिवासजी प्रवेश कर नित्य कल्याण दम्पतियों के रूप में प्रसिद्ध हुए। श्री पद्मावती श्रीनिवासजी जिस मार्ग से तिरुमल पहुँचे वही मार्ग (श्रीवारि मेट्टु) तत्पश्चात् बहुत से राजाओं, यात्रियों और भक्तों की वेंकटाचल यात्रा के लिए प्रधान मार्ग बन गया। नारायणवन के प्रभु, आकाशराज, तोंडमान आदि विजयनगर के राजाओं ने अपनी यात्रा के लिए इसी मार्ग को अपनाये। विजयनगर के राजा चंद्रगिरि में रहते समय तिरुमल-तिरुपति श्रीवारि घण्टानाद सुनने के बाद ही खाना खाते थे।

२२.११.१४३३ ई. के शिलालेख में बनाया गया कि १४३३ ई. तक श्रीनिवासमंगापुरम् और यहाँ का मंदिर बहुत प्रसिद्ध था। इस समय सिद्धकुटि, सिद्धकूटम्, श्रीनिवासपुरम्, श्रीनिवासमंगापुरम् आदि नामों से प्रसिद्ध यह गाँव कालान्तर में गायब हो गया। फिर से लगभग १०० (सौ) वर्षों के बाद विकसित यह गाँव (श्रीनिवासपुरम्) १५४० ई. के आसपास विजयनगर राजा अच्युत देवराय के द्वारा 'सर्वमान्य अग्रहार' के रूप में ताळ्ळपाक कवियों को प्रदान किया गया। उस समय ताळ्ळपाक अन्नमाचार्यजी का पोता चिनतिरुवेंगलनाथ ने श्रीनिवासमंगापुरम् के मंदिर को बहुत सुन्दर ढंग से जीर्णोद्धार किया और शिथिलावस्था की मूर्ति के स्थान पर नई मूर्तियों को प्रतिष्ठित कर शास्त्रों के अनुसार अर्चना, उत्सव मनाने के लिए व्यवस्था की थी। उनके शिष्य पद्मसाल भक्तों (जुलाहें) ने गुरुदक्षिणा के रूप में दस हजार वराह दिए। तिरुवेंगलनाथ के चाचा ने उन्हें दस हजार दिया। उसके साथ-साथ स्वयं और दस हजार मिलाकर बीस हजार वराह से श्रनिवासमंगापुरम् मंदिर को विकसित किया।

ताळ्ळपाकों के अधीन में रहनेवाला यह श्री कल्याणवेंकटेश्वरस्वामीजी का मंदिर पुनःविख्यात होगया। फिर उत्सवों के वैभव के साथ सौ वर्षों तक अविराम गति से श्रीनिवासमंगापुरम् की आध्यात्मिक शोभा बढ़ गई। एक बार कल्याणी नदी की बाढ़ और तुर्कों के आक्रमणों के कारण यहाँ की मूर्तियाँ शिथिल हो गई, लेकिन गर्भालय में दस फुट ऊँचाई से युक्त श्री कल्याणवेंकटेश्वर की मूलमूर्ति ही सौ वर्षों तक तेज प्रकाश और झांडों वल्मीक से ढकी हुई थी।

सन् १९०६ ई. में स्वामीजी के सम्बन्ध में एक चेतना आयी और उसका कारण है कि-

एक दिन अचानक श्रीनिवासमंगापुरम् में एक पागल जैसी औरत दिखाई पड़ी। वह कहाँ से आयी है उसका पता नहीं है? वह किसी से ज्यादा नहीं बोलती और उन्माद स्थिति में एक अवदूत या योगिनी की तरह रहती थी। लोग उसे 'तायारु' नाम से पुकारते थे। झाड़ों और वल्मीक से युक्त श्रीनिवासजी का मंदिर ही उसका आवास बना।

वह घर-घर पहुँचकर भिक्षा के रूप में तेल, चावल, दाल इत्यादि लाकर मंदिर के आंगन में तीन पत्थरों से चूल्हा बनाकर मटके में सभी मिलाकर उबालती थी। उसके बाद मंदिर में दीप जलाती थी। घनघोर अन्धकार में ताड के पत्तों को जलाकर उसके प्रकाश में मंदिर में प्रवेश करती थी। और रास्ते में बहुत सारे साँप उसके चारों ओर घेर लेते थे लेकिन वह डरती नहीं, फिर उन्हें नागा! शेष! नाम से पुकारती थी। ऐसे ही मंदिर में जाकर स्वामीजी के चरणों पर पुष्प रखकर दिया मिट्टी में तेल डालकर दीपाराधन करके उसके द्वारा बनाये गए अन्न को नैवेद्य (प्रसाद) के रूप में रखती थी। उसमें से थोडा सा लाकर सभी को प्रसाद के रूप में देती थी। और स्वयं खाती थी। नाग साँपों को दूध देती थी। यही उनकी दिनचर्या थी। अचानक एक दिन उसने लोगों से कहा कि मैं कल से यहाँ नही रहूँगी और मेरे स्थान पर एक स्वामीजी आयेंगे। उसी तरह अगले दिन स्वामीजी आये।

कांचीपुरम् से सुन्दरराजस्वामी आए। कल्याणवेंकटेश्वरस्वामीजी ने उनके स्वप्न में प्रत्यक्ष लेकर कहा कि तुम मेरे पास आओं। मैं अंधेरे में हूँ। झाड़ों और वल्मीक से युक्त हूँ। तुम यहाँ आकर मेरी सेवा और पूजा करों। स्वामी आप कहा है? मुझे कैसे पता चलता है। आदि प्रश्न सुंदरराजस्वामी के द्वारा पूछे जाने पर श्रीनिवासस्वामीजी ने उत्तर दिया कि पहले तुम शीघ्र ही वेंकटाचल की यात्रा करों तुझे मार्ग का पता चल जाएगा। आगामी आषाढ़ शुद्ध सप्तमी के दिन मेरी पूजा होनी चाहिए। तब शीघ्र ही सुन्दरराज स्वामीजी श्रीनिवासजी की खोज करते हुए घर से निकल पड़े और १५ दिनों में श्रीनिवासमंगापुरम् पहुँच गए। यहाँ पूछताछ करने पर लोगों ने तायरम्मा के बारे में और उसके द्वारा की गयी पूजा विधान के बारे में भी बताया। सुन्दरराज ने अपने स्वप्न के बारे में भी लोगों को बताया और बाद में सभी मिलकर आश्रम की शुद्धि की।

वह विक्रमनाम वर्ष, आषाढ़ शुद्ध सप्तमी, उत्तर फाल्गुनी नक्षत्र से युक्त शुभदिन अर्थात् ११-०७-१९४० का दिन था। फिर से सौ वर्षों के बाद सुन्दरराजस्वामी ने मंदिर का पुनःनिर्माण करके पहली पूजा की। ११-०७-१९४० से हर साल उसी तारीख को

'साक्षात्कार वैभवम्' नाम से श्रीनिवासमंगापुरम् के श्री कल्याणवेंकटेश्वरजी के एक दिन का उत्सव मनाया जाता था। इसके बाद तिरुमल तिरुपति देवस्थान के द्वारा सन् १९८० ई. से हर साल ''साक्षात्कार वैभवोत्सवम्'' नाम से तीन दिन के वार्षिकोत्सव मनाये जा रहे हैं। इसके बाद सुन्दरराजस्वामी के अर्चकत्व में यह मंदिर दिन-प्रतिदिन वैभव और वैभोग के साथ विकसित हुआ। सन् १९६७ ई. अप्रैल २६ को तिरुमल तिरुपति देवस्थान ने इस मंदिर को अपने अधीन ले लिया।

मंदिर निर्माण शैली

दस वर्ष के बाद अर्थात् सन् १९८० ई. को महाराजगोपुर प्रवेश द्वार लगभग १० फुट की ऊँचाई और ५ मंजिलों में कई शिल्पों से युक्त बनाया गया। प्रवेश का द्वार पार करके अन्दर उसके सामने बलिपीठ और ध्वजस्तंभ है। विशाल

प्रांत में चार दीवारी के बीच लगभग १०० फुट ऊँचाई से युक्त पत्थर पर श्री कल्याणवेंकटेश्वर स्वामीजी के प्रधान मंदिर का निर्माण हुआ। स्वामीजी का मंदिर, मुखमंडप (घंटा मंडप) अर्धमंडप, शयनमंडप, अंतरालय, गर्भालय नामक पाँच मंडपों से निर्मित हुआ। मंदिर के आँगन में नैरुति दिशा में श्रीवारि कल्याण मंडप है। घंटामंडप में स्वामीजी की मूलमूर्ति के सामने ही पश्चिमाभिमुख गरुडाल्वार सन्निधि है। मुखमंडप में वायुव्य की दिशा में दो बड़े घंटे लटकाये हुए है। इसी मंडप में जय-विजय की मूर्तियाँ हैं। जय-विजय के द्वार पार करने के बाद अंदर ही अर्धमंडप है। इसी को स्वप्न मंडप भी कहते हैं। इसमें स्वामीजी के आभूषण सुरक्षित रखे गये हैं। इस मंडप के बाद शयन मंडप है। इसके बाद अंतरालय आता है। अंतरालय में दक्षिण दीवार के उत्तराभिमुख आसीन भंगिमा में श्रीलक्ष्मीनारायण की शिला मूर्ति है। उत्तर दीवार के पश्चिम की ओर सिर रखकर दक्षिणाभिमुख पांच फणों वाले आदिशेष पर विश्राम लेने वाले श्रीरंगनाथजी की मूर्ति है। इस प्रकार स्वामीजी का ब्रह्मोत्सव १९८० ई. फरवरी को और १९८१ ई. फरवरी, १९ को पहली बार कल्याणोत्सव आडंबर के साथ मनाया गया। अंतरालय से अंदर जायेंगे तो श्रीनिवासजी का गर्भालय दिखाई देता है। यहाँ पूरब मुखी, मूलमूर्ति प्रतिष्ठित है। गर्भालय के ऊपर एक कलश विमान त्रिकलगोपुर की तरह निर्मित है। चतुर्भुज से युक्त स्वामीजी ऊपर के दोनों हाथों में शंख चक्र धारण किए हुए है।

मुख्य रूप से श्री सुन्दरराज स्वामी मध्वाचार्य संप्रदाय के तंत्रसारागमम् की तरह पूजा करते थे। उनके पश्चात्य यहाँ पूर्ण रूप से वैखानस आगम शास्त्र के अनुसार पूजा होती है।

उत्सव और सेवाएँ

नित्योत्सवों में सुप्रभात, तोमाल सेवा, सहस्त्रनामार्चना, नित्य कल्याणोत्सव आर्जित ब्रह्मोत्सव आदि हो रहे है। ब्रह्मोत्सव में अश्ववाहन, हनुमद्वाहन, गरुड़ सेवा, एकांत सेवा शामिल है। सप्ताहोत्सवों में स्वर्ण पुष्पार्चन, शतकलशाभिषेक, तिरुप्पावडा सेवा, नेत्रदर्शन, पूलंगि सेवा, अभिषेक, वस्त्रालंकार सेवा, ग्रामोत्सव आदि मनाये जाते हैं। मासोत्सवों में श्रवणा नक्षत्र के दिन ऊँजल सेवा होती है। वार्षिकोत्सवों में उगादि पर्व, श्रीरामनवमी, धनुर्मास पूजा, माघ मास में अर्थात् सौरमान प्रकार कुम्भ मास में श्रवणा नक्षत्र के ९ दिन पहले ब्रह्मोत्सव आरम्भ होते है और श्रवणा नक्षत्र के दिन समाप्त होते हैं। हर साल फाल्गुनी मास में श्रवणा नक्षत्र के दिन पुष्प यज्ञ होता है। वैशाख मास में तीन दिन वार्षिक वसंतोत्सव मनाते है। हर साल आषाढ़ शुद्ध सप्तमी या उत्तर फाल्गुनी के प्रथम दिन और अगले दिन अर्थात् तीन दिन ''साक्षात्कार वैभवोत्सव'' मनाये जाते है। हर साल जुलाई १६ या १७ को दक्षिणायन पुण्यकाल में आणिवार आस्थान का आयोजन होता है। हर साल आश्वयुज बहुल द्वादशी समाप्त होने की तरह तीन दिन पवित्रोत्सव मनाये जाते है।

इस प्रकार प्रसिद्ध और बहु प्रचलित श्री कल्याणवेंकटेश्वरस्वामीजी का दर्शन करके हम धन्य होंगे।

महाशिवरात्रि पर्व

- श्री ज्योतीन्द्र अजवालिया
मोबाइल - ९८२५११३६३६

महाशिवरात्रि (२१ फरवरी २०२०) के संदर्भ में...

माघकृष्ण चतुर्थस्यां आदि देवो महानिशि।
शिवलिंग द्वोदभूतं कोटि सूर्य समप्रभम्ः।
तत्काल व्यापिनी ग्राह्या, शिवरात्रि व्रते तिथिः।
अर्धरात्रा दधश्चोर्ध्वम युक्ता यत्र चतुर्दशी।। (इशान संहिता)

कहते है कि माघमास की कृष्णपक्ष की चौदहवी तिथि की मध्यरात्रि को करोड सूर्य समान तेजोवाले महादेवजी लिंगाकार के रूप में आविर्भूत हुये तब से हर मास की कृष्णपक्ष की चौदहवी तिथि शिवरात्रि के नाम से प्रचलित है। हर मास की शिवरात्रि को ''मासशिवरात्रि'' कहते है, जब की माघमास की कृष्ण चौदहवीं तिथि को पूरे संसार 'महाशिवरात्रि' के नाम से जानते है।

महाशिवरात्रि का अर्थ क्या है? महालिंग आविर्भाव की रात्रि, 'महाशिवरात्रि'। रात्रि का समय सुख देनेवाला होता है, इस विचार से देखे तो शिवरात्रि शुभगुणों से संपन्न है, जीवात्मा को सुख एवं ब्रह्मानंद प्रदान करता है।

पौराणिक कथा में बताया है कि समुद्रमंथन के समय सबसे पहले विष प्राप्त हुआ, ये विष संसार को खत्म करनेवाला था, तब संसार की रक्षा हेतु सदाशिव ने ये पूरा विष पान कर लिया, पूरा विष अपने गले में धारण कर लिया। सदाशिव का कंठ भी नीला हो गया। तब से सदाशिव 'नीलकंठ' के नाम से प्रचलित है। जब सदाशिव ने अपने कंठ में विष धारण किया तब वे मूर्छित हो गये, तब शिवजी को साधारण स्थिति में लाने के लिये माँ पार्वती और सब देवतागण ने पूरी रात जागरण करके शिवजी के पास में अनेक दिव्य स्तोत्र का गान किया, विशेष स्तुति भी की, बाद में महादेवजी साधारण स्थिति में आये। ये पवित्र दिवस और रात्रि महाशिवरात्रि के नाम से प्रचलित हुई। सदाशिव की साधारण स्थिति में आये जब सारे देवतागण ने प्रणाम किया, तब सदाशिव ने वचन दिया की जीवात्मा, इस पवित्र दिन भक्ति से उपवास

करेगा, पूरी रात जागरण के साथ मेरा पूजा, अर्चना करेगा वो जीवात्मा, शरणागति प्राप्त कर लेगा और मैं उसे चतुर्थ मुक्ति प्रदान करूँगा। तब से महाशिवरात्रि का पर्व पूरे संसार में बडी धूमधाम से मनाने लगे।

शास्त्र में वर्णन है कि कृष्णपक्ष का समय अंधकारमय है, इस समय में हमें ज्ञान की जरूरत होती है। कोई भी जीवात्मा महाशिवरात्रि के दिन पूरी रात जागरण करके शिवनामस्मरण, पंचाक्षर मंत्र, मृत्युंजय महामंत्र का अनुसंधान करते है वे निजानंद को प्राप्त करके ज्ञान को प्राप्त कर लेता है। महाशिवरात्रि के दिन उपवास और रात्रि जागरण मानव को मुक्ति प्रदान करता है।

इस बात का प्रमाण आद्यगुरु शंकराचार्य ने अपने ग्रंथ ''शिवानंद लहरी'' इस श्लोक में प्रदर्शित किया है।

सारूप्य तव पूजने, शिवमहादेवति संकीर्तने।
सामिप्यं शिवभक्तिधूर्य, जनता सांगत्य संभाषणे।।
सालोक्यं च चराचरात्मक तनुध्याने भवानि पते।
सायुज्यं मम सिद्धमंत्र भवति स्वामिन्। कृतार्थोस्म्यहं।।

शिवरात्रि के रात में जागरण करके चार प्रहर की पूजा करने से जीवात्मा को सारूप्य, सामीप्य, सालोक्य और सायुज्य चारों प्रकार की मुक्ति मिलती है, और साथ-साथ में मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार का भी शुद्धि होती है।

कठोपनिषद में भी वर्णन है ''उत्तिष्ठवत् जाग्रत प्राप्यवरान्निबोधता''

शास्त्र में कहा गया है की शिवरात्रि के दिन रुद्राभिषेक करने से आयु की वृद्धि होती है, अकाल मृत्यु से मुक्ति पाकर पूर्ण आयु, सुख प्राप्त होता है। मनुष्य साल भर की हर मास की शिवरात्रि को शिवमय बनकर उपवास और जागरण करके शिव नाम स्मरण करता है उसका जन्म सार्थक हो जाता है।

हमारा हिन्दू शास्त्र में हर उत्सव दिन को मनाते है लेकिन साल भर में दो उत्सव मध्यरात्रि को मनाते है। एक जन्माष्टमी और दूसरी शिवरात्रि। 'जन्माष्टमी' और 'शिवरात्रि' दोनों में रात्रि के समय में प्रभु उपासना करने का वचन है।

पुराण में कहा गया है कि कोई भी महापापी गलती से भी शिवरात्रि का उपवास और रात्रि जागरण करके शिवनाम ले लेता है, वो भी सायुज्य मुक्ति प्राप्त कर लेता है।

एक पौराणिक कथा इस प्रकार है - की सुकुमार बहुत पापी थे, बहुत कंगाल भी थे। पानी और अन्न के बिना बहुत तडप रहे थे। एक बार अन्न और पानी की खोज में शिवालय में आ गये, इस दिन शिवरात्रि थी। रात्रि के समय शिवालय में प्रसाद की चोरी करने गया, गलती से पूरी रात का जागरण हो गया और गलती से शिव पर जल भीचड गया। इस शिवरात्रि पूजा से वो महापापी सुकुमार जीवन भर के लिए पाप मुक्त होकर तर गया।

दूसरी कथा इस प्रकार है निशाद - कन्नप्पा नाम का शिकारी अपने परिवार की भूख को मिटाने के लिए रात्रि के समय में शिकार की खोज में निकला। शिकार की खोज में बिलीपत्र के वृक्ष पर चड गये। एक के बाद एक हीरन वहाँ आया। हीरन का शिकार करने आगे बढा, तब हीरने कहा मेरा पूरा परिवार का एक साथ शिकार कर लेना। मैं सब को बुला के आता हूँ। उसकी प्रतीक्षा में रात बीतती चली। शिकारी के पास पीने का पानी था, वृक्ष ऊपर से पानी और बिलीपत्र गलती से नीचे गिरता

रहा, नीचे शिवलिंग था, वो दिन भी शिवरात्रि का था। इस तरह गलती से शिकारी ने जल और बीली से शिवरात्रि की रात्रि को शिवपूजा की, और हीरन परिवार की प्रतीक्षा में जागरण होने से ज्ञान की प्राप्ति हुई और आयें हुये हीरन परिवार को उसने छोड दिया। तब हीरन के परिवार और भील शिकारी को सायुज्य मुक्ति हो गई।

इस तरह शिवरात्रि को लोककल्याण पर्व कहा जाता है।

''शिव रहस्य खंड'' में एक हकीकत ऐसी मिलती है की एक बार माँ पार्वती ने अपने दोनों हाथ से शिवजी की आँखों को बंध कर दिया, तब पूरा संसार अंधकारमय हो गया। क्योंकि सदाशिव की एक आँख में सूर्य और दूसरी आँख में चंद्र विराजमान रहता है।

पार्वती से शिवजी की दोनों आँख बंध होने से संसार में अंधकार हो गया। रात हो गई, इस अंधकारमय रात ही महाशिवरात्रि है।

◆ शिवरात्रि के पवित्र महारात्रि के समय ''गिरिजा कल्याण महोत्सव'' होता है। जगन्माता पार्वती और सदाशिव का विवाह होता है।

◆ भीष्म पितामत महाभारत के शांतिपर्व में कहते है, चित्रभानु राजा ने महाशिवरात्रि व्रत करके अपना जीवन चरितार्थ कर लिया था।

◆ महाशिवरात्रि की रात्रि को भस्म बनाने का विधान है, कहा गया है कि शिवरात्रि की रात्रि में बनी हुई भस्म बहुत पवित्र होती है। ये भस्म का त्रिपुंड्र लगाने से मानव की उन्नति होती है।

◆ इस शिवरात्रि की महारात्रि में स्वामी दयानंदजी को ज्ञान का उदय हुआ था।

इस तरह भौतिक सुख प्राप्त करने हेतु, आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करने के लिये सुख, शांति, बुद्धि, विद्या प्राप्त करने हेतु और इस जीवन को धन्य बनाने हेतु हमें महाशिवरात्रि का उपवास और महाशिवरात्रि जागरण अवश्य करना चाहिये।

ॐ नमो शंभवाय च मयो भवाय,
नमो शंकराय च मयस्कराय च।
नमः शिवाय च शिव तराय च।।

ॐ नमः शिवाय...

सुख लाती सूर्य जयन्ती

- श्री के.रामनाथन
मोबाइल - ९४४३३२२२०२

हर दिन इस धरती के पूरब की दिशा की ओर उदित होकर पश्चिम दिशा में अस्त होने वाला प्रकाशमान सूरज नवग्रहों का राजा माना जाता है। इस धरती पर तमस को दूर करके ज्योति को फैलाने वाला सूरज, सभी जीवों को शक्ति प्रदान करने वाला भी है। सभी जीवों के जीवनाधार सूरज की महान शक्ति को वेद और पुराण बडे पैमाने पर गुणगान करते हैं। ऋग्वेद सूरज को तीन प्रकार की अग्नियों में श्रेष्ठ अग्नि कहता है। यजुर्वेद कहता है कि, सारे संसार को दीप्तिमान करने वाला सूरज मात्र है। अथर्ववेद कहता है कि, जो सूर्यदेव की उपासना करते हैं, वे हृदय रोग से मुक्त होते हैं।

सूर्य जयन्ती

दक्षिण दिशा में यात्रा करने वाला सूरज, जिस दिन उत्तर दिशा की ओर अपनी यात्रा को प्रारंभ करता है, वह दिन 'रथसप्तमी' माना जाता है। यह उत्तरायण काल में माघ महीने में, अमावास्या के बाद आने वाला सातवाँ दिन है। इस दिन से सूरज की यात्रा दक्षिण दिशा में समाप्त होकर उत्तर दिशा में होने लगती है। शास्त्र कहते हैं कि सूरज अपनी उत्तर दिशा की यात्रा के प्रारंभ में, इस सप्तमी के दिन से शनै-शनै ही अपनी किरणों में गरमी तेज बढाता है। शास्त्रों के इस कथन को आज का विज्ञान भी पूर्ण रूप से मानता है। इसलिए विशेष प्रकार का प्रकाश पैदा होने वाला यह दिन, याने रथसप्तमी का दिन, सूरज का जन्म दिन माना जाता है। इसलिए इस दिन को सूर्य सप्तमी, अचला सप्तमी, भानु सप्तमी, आरोग्य सप्तमी के नाम से भी लोग मनाते हैं।

नमस्कार प्रिय

माना जाता है कि सूरज का जन्म भगवान श्री नारायण की आँखों की चमक से हुआ। इसलिए सूरज को भगवान श्री नारायण का अंश मानते हैं। इससे सूरज को 'सूर्य नारायण' के नाम से भी बुलाते हैं। सूरज को आदित्य, मित्र, सवीता, अर्क, भास्कर, मरीची, दिवाकर आदि विभिन्न नामों से भी बुलाते हैं। हम जानते हैं कि भगवान श्री नारायण अलंकार प्रिय है। वैसे ही सूरज नमस्कार प्रिय माना जाता है। सूर्योपासना का प्रारंभ तो वेदकाल से माना जाता है। ऐसी उपासना आज तो सबेरे सूर्य नमस्कार और शाम को सन्ध्योपासना के रूप में हमारे

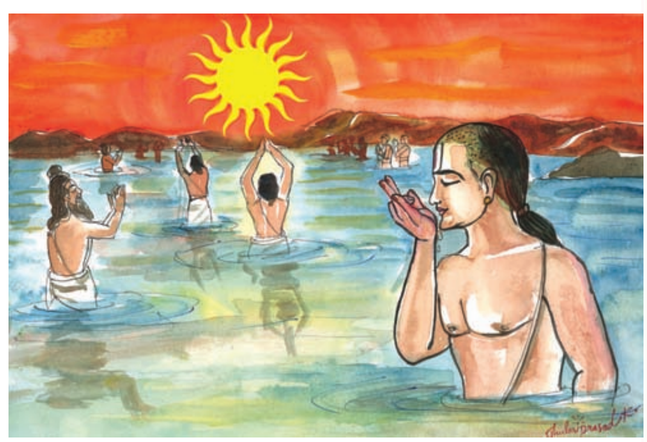

नित्य कर्म में एक बनकर पालन की जाती है। सूर्याष्टकम्, आदित्य हृदयम्, सूर्यगायत्री, सूर्य सहस्रनामावली आदि सूरज की महिमा को बताकर उसकी उपासना करते हैं।

अतिथि का पुत्र

सूरज के जन्म के बारे में एक पौराणिक कथा प्रचलित है। अतिथि महर्षि कश्यप की पत्नी है। गर्भवती नारी अतिथि एक दिन दोपहर के समय अपने पतिदेव को भोजन परोस रही थी। तब एक भूखा ब्राह्मण उसके द्वार पर आकर खाना माँगने लगा। अपने पतिदेव को भोजन परोसने के बाद गर्भवती अतिथि ने धीरे से बाहर आकर उसको खाना दिया। उसका व्यवहार देखकर ब्राह्मण ने सोचा कि इसने यों ही देर करके, भूख में तडपते मुझे खाना देकर अपमान किया है। इसलिए वह क्रोधित हो उठा और अतिथि को देखकर शाप दिया कि तुम्हारे गर्भ से पैदा होने वाला बच्चा मर जाएगा।

ब्राह्मण का यह शाप सुनकर अतिथि एकदम चिंतित हो उठी। उसने तुरंत अपने पतिदेव से मिलकर अपने मन की वेदना बतायी। पत्नी की बात सुनकर महर्षि कश्यप ने कहा, ''निर्दोष नारी, चिंता मत करो। तुमको सदा जीवित रहने वाले पुत्र का जन्म होगा।'' पतिदेव की सांत्वना और आशीर्वचन सुनकर अतिथि ने चैन की साँस ली। आखिर महर्षि के आशीर्वाद के अनुसार उसे सदा जीवित रहने वाले प्रकाशमान सूरज का जन्म हुआ।

कृपा पात्र

सम्राट इक्ष्वाकु की परंपरा में जनमे श्रीरामचन्द्र सूर्य कुल के माने जाते हैं। उन्होंने सूर्योपासना करने के बाद ही राक्षस का वध किया। पांडवों के ज्येष्ठ युधिष्ठिर ने सूरज की उपासना के फल स्वरूप अक्षयपात्र को प्राप्त किया। पाँडवों की माता कुंतीदेवी ने सूरज की उपासना के कारण दान और वीरता में श्रेष्ठ कर्ण का जन्म दिया। माना जाता है कि वायु पुत्र हनुमान ने सूरज से व्याकरण का ज्ञान पाया। पितामह भीष्म ने अपनी मृत्यु के लिए रथसप्तमी के दिन का इंतजार किया था। सूरज का पुत्र शनीश्वर, रथसप्तमी के दिन अपने पिता सूरज और माता छायादेवी के चरणों की पूजा करते हैं।

आरोग्य सप्तमी

सूरज के किरणों में कोढ़ रोग को दूर करने की शक्ति होती है। इस पर एक कहानी भी प्रसिद्ध है। श्रीकृष्ण का पुत्र सांब बडा बलशाली था। एक बार महर्षि दुर्वास अपनी कठोर तपस्या की पूर्ति के बाद श्रीकृष्ण से मिलने आये थे। लंबे समय की कठोर तपस्या के कारण उनका शरीर अत्यंत कमजोर एवं पतला हो गया था। उनका ऐसा रूप देखकर बलवान सांब ने खिल्ली उडायी। सांब के व्यवहार से अपमानित महर्षि दुर्वास क्रोधित हो उठे। अपने शरीर के बल से घमंडित सांब को देखकर उन्होंने उसे कोढ़ रोगी बन जाने का शाप दिया। इससे सांब कोढ़ रोगी बनकर अनेक कष्टों का सामना करने लगा। उसको अपना अपराध महसूस हुआ और पिता श्रीकृष्ण से मिलकर सारी बातें बतायी। श्रीकृष्ण ने उसे समझाते हुए कहा कि सूर्योपासना के द्वारा ही इस रोग से मुक्त हो सकते हो। तब से सांब लगातार सूर्योपासना करने लगा और आखिर अपने रोग से मुक्त हुआ। इस कारण रथसप्तमी को आरोग्य सप्तमी भी कहते हैं।

त्रिमूर्ति का रूप

सूर्यदेव हमारी आँखों के सामने दर्शन देने वाला भगवान माना जाता है। असल में सूरज हमारे सभी कार्यों को देखने वाला एक कर्म साक्षी देवता भी है। माना जाता है कि सूरज का रथ चार सम कोणों से बना है। यह रथ एक ही पहिए के बल से चलता है। इस पहिए को कालचक्र भी कहते हैं। कहा जाता है कि इस रथ को सात घोडे खींच ले जाते हैं। वे सात घोडे सात रंगों या सात दिनों का प्रतीक है। ऋग्वेद सूरज को त्रिदेव के रूप में देखता है।

उदये ब्रह्मरूपश्च, मध्याह्नेतु महेश्वरः।

अस्तकाले स्वयं विष्णुः, त्रिमूर्तिश्च दिवाकरः।।

यानी, सबेरे उदय के समय सूरज का रूप भगवान ब्रह्म, दोपहर के समय भगवान शिव और अस्त के समय पर श्री विष्णु के रूप में प्रदर्शित होता है।

पत्ते और भगवान

वेदकाल से यह प्रथा प्रचलित है कि भगवान की उपासना में विशेष पत्तों को भी स्थान दिया गया। इस प्रथा के अनुसार श्री विष्णु की उपासना में तुलसी के पत्ते, भगवान शिव की पूजा में बिल्व के पत्ते और गणेश की उपासना में दुर्वा दूब को विशेष स्थान दिये गये हैं। उसी प्रकार रथसप्तमी में अर्क के पत्ते विशेष स्थान पाते हैं। संस्कृत में अर्क शब्द सूरज और अर्क के पत्तों को सूचित करता है।

माना जाता है कि सूरज का रथ चतुर कोणों से बना है। वैसे ही अर्क के पत्ते का रूप भी चतुर कोणों से होता है। इसलिए उसे सूरज के रथ के रूप के बराबर मानते हैं। इतना ही नहीं अर्क के पत्तों में अनेक औषधीय गुण होते हैं। इस पत्ते के प्रयोग से त्वचा रोग, कोढ़ रोग, जोड दर्द आदि से मुक्ति मिलती है। इसलिए रथसप्तमी के दिन स्नान करने वाले अर्क के सात पत्तों को लेकर एक को अपने सिर पर, दो पत्तों को दोनों कंधों पर, दो पत्तों को दो घुटनों पर और आखिर दो पत्तों को पैरों पर रखकर सूरज की उपासना करते हुए स्नान करते हैं। विश्वास है कि, ऐसी उपासना से सातों जन्मों के पाप से मुक्ति मिलती है।

मंदिरों में उत्सव

भगवान श्री नारायण के अंश के रूप में सूर्यदेव की उपासना की जाती है। इसलिए सभी वैष्णव मंदिरों में रथसप्तमी के दिन भगवान श्री विष्णु सूर्यप्रभा के वाहन में आकर भक्तों को अपना दिव्य दर्शन देते हैं। हमारे भारतवर्ष में ओडीश में कोणार्क, आंध्र में अरसविल्ली, तिरुच्ची में श्रीरंगम्, कुम्बकोणम में सूर्यनार मंदिर, बिहार में दक्षिणार्क मंदिर, गुजरात में सूर्य पहार मंदिर आदि स्थानों में रथसप्तमी का उत्सव बडे पैमाने पर मनाया जाता है। इतना ही नहीं, आं.प्र., चित्तूर में स्थित तिरुचानूर श्री पद्मावती देवी के मंदिर में स्थापित सूर्यदेव की विशेष उपासना होती है।

तिरुमल में उत्सव

भूलोक वैकुंठ माने जाने वाले तिरुमल में रथसप्तमी एक दिवसीय ब्रह्मोत्सव के रूप में बडे धूमधाम से मनाया जाता है। इस उत्सव के अवसर पर श्री मलयप्पस्वामी श्रीदेवी और भूदेवी सहित भक्तों को अपना दिव्य दर्शन देते हैं। उस समय भगवान सूर्यप्रभावाहन, लघुशेषवाहन, गरुडवाहन, हनुमंतवाहन, कल्पवृक्षवाहन, सर्वभूपालवाहन और चंद्रप्रभावाहन में आरूढ़ होकर भक्तों को दर्शन देते हैं। यह तो सच है, सूर्यदेव हमारी आँखों को प्रकाश, मन को बल और शरीर को तंदुरुस्ती प्रदन करता है। ऐसे सूर्यदेव को रथसप्तमी के दिन हम भी उपासना करेंगे और उनकी कृपा का पात्र बनेंगे।

वैकुंठ एकादशी (०६-०१-२०२०) के संदर्भ में तिरुमल श्री बालाजी के मंदिर में अलंकृत फूल मालाएँ, स्वर्णरथोत्सव के दृश्य

श्रीहरि के भक्तों को वैकुंठ एकादशी की शुभकामनाएँ बताते हुए ति.ति.दे. न्यास-मंडली के अध्यक्ष श्री वाई.वी.सुब्बारेड्डीजी

श्री स्वामिपुष्करिणी में संपन्न चक्रस्नान

तिरुमल तिरुपति देवस्थान
सप्तगिरि
सचित्र मासिक पत्रिका
फरवरी-2020

सूर्याष्टोत्तर शतनामावली:

ॐ अरुणाय नमः
ॐ शरण्याय नमः
ॐ करुणारससिंधवे नमः
ॐ असमानबलाय नमः
ॐ आर्तरक्षकाय नमः
ॐ आदित्याय नमः
ॐ आदिभूताय नमः
ॐ अखिलागमवेदिने नमः
ॐ अच्युताय नमः
ॐ अखिलज्ञाय नमः १०
ॐ अनंताय नमः
ॐ इनाय नमः
ॐ विश्वरूपाय नमः
ॐ इज्याय नमः
ॐ इंद्राय नमः
ॐ भानवे नमः
ॐ इंदिरामंदिराप्ताय नमः
ॐ वंदनीयाय नमः
ॐ ईशाय नमः
ॐ सुप्रसन्नाय नमः २०
ॐ सुशीलाय नमः
ॐ सुवर्चसे नमः
ॐ वसुप्रदाय नमः
ॐ वसवे नमः
ॐ वासुदेवाय नमः
ॐ उज्ज्वलाय नमः
ॐ उग्ररूपाय नमः
ॐ ऊर्ध्वगाय नमः
ॐ विवस्वते नमः
ॐ उद्यत्किरणजालाय नमः ३०
ॐ हृषीकेशाय नमः
ॐ ऊर्जस्वलाय नमः
ॐ वीराय नमः
ॐ निर्जराय नमः
ॐ जयाय नमः
ॐ ऊरुद्वयाभावरूप -
युक्तसारथये नमः

ॐ ऋषिवंद्याय नमः
ॐ रुग्घन्त्रे नमः
ॐ ऋषिचक्रचराय नमः
ॐ ऋजुस्वभावचित्ताय नमः ४०
ॐ नित्यस्तुत्याय नमः
ॐ ऋकारमातृकावर्ण -
रूपाय नमः
ॐ उज्ज्वलतेजसे नमः
ॐ ऋक्षादिनाथमित्राय नमः
ॐ पुष्कराक्षाय नमः
ॐ लुप्तदंताय नमः
ॐ शांताय नमः
ॐ कांतिदाय नमः
ॐ घनाय नमः
ॐ कनत्कनकभूषाय नमः ५०
ॐ खद्योताय नमः
ॐ लूनिताखिलदैत्याय नमः
ॐ सत्यानंदस्वरूपिणे नमः
ॐ अपवर्गप्रदाय नमः
ॐ आर्तशरण्याय नमः
ॐ एकाकिने नमः
ॐ भगवते नमः
ॐ सृष्टिस्थित्यंतकारिणे नमः
ॐ गुणात्मने नमः
ॐ घृणिभृते नमः ६०
ॐ बृहते नमः
ॐ ब्रह्मणे नमः
ॐ ऐश्वर्यदाय नमः
ॐ शर्वाय नमः
ॐ हरिदश्वाय नमः
ॐ शौरये नमः
ॐ दशदिक्संप्रकाशाय नमः
ॐ भक्तवश्याय नमः
ॐ ओजस्कराय नमः
ॐ जयिने नमः ७०
ॐ जगदानंदहेतवे नमः
ॐ जन्ममृत्युजराव्याधि -
वर्जिताय नमः
ॐ उच्चस्थान -
समारूढरथस्थाय नमः
ॐ असुरारये नमः
ॐ कमनीयकराय नमः
ॐ अब्जवल्लभाय नमः
ॐ अंतर्बहिःप्रकाशाय नमः
ॐ अचिंत्याय नमः
ॐ आत्मरूपिणे नमः
ॐ अच्युताय नमः ८०
ॐ अमरेशाय नमः
ॐ परस्मैज्योतिषे नमः
ॐ अहस्कराय नमः
ॐ रवये नमः
ॐ हरये नमः
ॐ परमात्मने नमः
ॐ तरुणाय नमः
ॐ वरेण्याय नमः
ॐ ग्रहाणांपतये नमः
ॐ भास्कराय नमः ९०
ॐ आदिमध्यांतरहिताय नमः
ॐ सौख्यप्रदाय नमः
ॐ सकलजगतांपतये नमः
ॐ सूर्याय नमः
ॐ कवये नमः
ॐ नारायणाय नमः
ॐ परेशाय नमः
ॐ तेजोरूपाय नमः
ॐ श्रीं हिरण्यगर्भाय नमः
ॐ ह्रीं संपत्कराय नमः १००
ॐ ऐं इष्टार्थदाय नमः
ॐ अनुप्रसन्नाय नमः
ॐ श्रीमते नमः
ॐ श्रेयसे नमः
ॐ भक्तकोटिसौख्यप्रदायिने नमः
ॐ निखिलागमवेद्याय नमः
ॐ नित्यानंदाय नमः
ॐ छायाउषादेवी समेत -
श्री सूर्यनारायण स्वामीने नमः १०८

तिरुमल श्री वेंकटेश्वरस्वामीजी के मंदिर में २५ दिनों तक संपन्न अध्ययनोत्सव के दृश्य

तिरुमल श्री बालाजी के मंदिर में वैकुंठ एकादशी के अवसर पर
ति.ति.दे. द्वारा आयोजित कोयिलाल्वार तिरुमंजन (आलयशुद्धि) कार्यक्रम के दृश्य

हाल ही में तिरुपति श्री पद्मावती महिला विद्यालयों में महिलाओं के बारे में 'उत्तम समाज निर्माण केलिए महिलाओं को शिक्षा की आवश्यकता' केलिए अपने भाषण देते हुए ति.ति.दे. न्यास-मंडली के सदस्य डॉ.सुधानारायण मूर्ति

दिसंबर महीने में तिरुमल कुमारधारा, पसुपुधारा बाँधों के पास गंगा की पूजा करते हुए
ति.ति.दे. कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री अनिल कुमार सिंघाल, आई.ए.एस.

भागवत कथा सागर

इन्द्र का घमण्ड और उसके परिणाम

तेलुगु मूल - डॉ.वैष्णवांघ्रि सेवक दास

हिन्दी अनुवाद - श्री अमोघ गौराँग दास

मोबाइल - ९८२१९१४६४२

इस कथा में प्रस्तुत वर्णन श्रीमद्भागावतम् के छठे स्कन्ध में प्राप्त होता है। तीनों लोकों पर आधिपत्य होने के कारण इन्द्र देव को अत्यन्त घमण्ड हो गया था। एक बार अन्य देवताओं द्वारा अपनी स्तुति का गायन स्वीकार करते हुए वे अपने दरबार में अप्सराओं के नृत्य का आनंद ले रहे थे। इन्द्र की प्रसन्नता के लिए गन्धर्व मधुर स्वर में गायन कर रहे थे। इन्द्र के सर पर पूर्ण चन्द्रमा के समान तेजवान श्वेत छत्र बना था। वे अपनी पत्नी शचीदेवी के साथ सुनहरे सिंहासन पर बैठे थे। तभी उस सभा में देवताओं के गुरु देवगुरु बृहस्पति ने इन्द्र को आशीर्वाद देने के लिए वहाँ प्रवेश किया। अपनी शक्ति के कारण बृहस्पति देवताओं एवं असुरों दोनों के द्वारा सामान रूप से सम्मानित थे। उनमें किसी को भी आशीर्वाद या शाप देने की शक्ति थी। उनके दरबार में प्रवेश करते ही सभी व्यक्तियों ने अपने स्थानों से उठकर अपने स्वामी को सम्मान दिया। लेकिन घमण्ड के मद में चूर होने के कारण इन्द्र ने बृहस्पति के आने पर कोई प्रतिक्रिया न करके उनका अनादर किया। उस अवस्ता में इन्द्र द्वारा बृहस्पति का स्वागत करने एवं उचित स्थान देने का प्रश्न ही नहीं उठता था। इस प्रकार उन्होंने वैदिक शिष्टता का उल्लंघन करके अमंगल का आह्वान किया। देवगुरु समझ गये कि इन्द्र ऐश्वर्य एवं पद के मद से फूल उठा था। चाहते तो वे इन्द्र को शाप दे सकते थे, किन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया और सहनशीलता पूर्वक अपनी कुटिया में वापस चले गये।

यह सब होने के बाद इन्द्र को अपनी भूल समझ में आई। अपने गुरु का निरादर करने के लिए उन्हें बहुत ग्लानि हो रही थी और उन्होंने अपनी सभी त्रुठियों के लिए स्वयं ही अपनी भर्त्सना की। उन्होंने गुरुदेव के चरण कमलों में नतमस्तक होकर क्षमा याचना करने का निश्चय किया। वे बृहस्पति से क्षमा माँगकर आशीर्वाद लेने के लिए बवंडर की गति से उनकी कुटिया की ओर गये। तभी गुरु बृहस्पति इन्द्र के अन्दर आये बदलाव को जानकर शिष्य के पहुँचने से पहले ही अपने स्थान से चले गये। वे अपने शिष्य को स्थायी पाठ पढ़ाना चाहते थे। इन्द्र व्यर्थ ही बृहस्पति को कुटिया में सभी जगह ढूढ़ते रहे। उन्हें तुरंत ही आने वाले अमंगल का आभास हुआ। यद्यपि इन्द्र इच्छापूर्ण करने वाले देवताओं के मध्य थे, किन्तु वे चिन्ताओं के गहरे सागर में डूब गये। वे अत्यंत अशांत एवं असीम दुःख में डूबे थे। गुरुदेव के दर्शन परम पुरुषोत्तम भगवान के दर्शन तुल्य होते हैं। गुरुदेव का अप्रसन्न होना महान खतरे एवं आपदा का सूचक है। इन्द्र अपने दुर्भाग्यपूर्ण भविष्य के बारे में चिन्तित थे।

तभी इन्द्र की दयनीय दशा के बारे में जानकर असुरों ने अपने गुरु शुक्राचार्य के आदेश से स्वर्गलोक पर आक्रमण कर दिया। असुरों एवं देवताओं के मध्य युद्ध पहली बार नहीं हो रहा था लेकिन इस बार बृहस्पति के अप्रसन्न होने से देवताओं की शक्ति क्षीण हो गई थी और उन्हें महान पराजय का सामना करना पड़ा। देवता युद्ध में सब कुछ हार गये और घोर अपमान से मुह लटकाकर वापस आ गये। वे सभी ब्रह्माजी के पास गये, जिन्होंने उनकी दयनीय स्थिति देखकर निम्न निर्देश दिये।

''प्रिय देवगणों! ऐश्वर्य के घमण्ड में तुमने अपने गुरुदेव का अपमान किया है। गुरुदेव के दरबार में पधारने पर इन्द्र ने अपने स्थान से उठकर उनका स्वागत एवं सम्मान नहीं किया। अपने गुरु की उपेक्षा करने के कारण तुम्हे युद्ध में पराजित होना पडा। इसके विपरीत सभी असुर भली प्रकार अपने गुरुदेव का पूजन करके अब अत्यंत शक्तिशाली हो गये हैं। ब्राह्मणों, गायों एवं गोविन्द की सेवा करने वाले व्यक्ति सदैव स्थिर एवं सफल होते हैं। यही सफलता का राज है। अब तुम त्वष्टा के पुत्र विश्वरूप के पास जाओ और उन्हें अपना गुरु स्वीकार करो। वह एक पवित्र ब्राह्मण हैं। यद्यपि उनका झुकाव असुरों के प्रति है, लेकिन वे तुम्हारा मार्गदर्शन करना अवश्य स्वीकार करेंगे। यदि वे तुमसे प्रसन्न हो गये तो तुम्हारी सभी इच्छाएँ पूर्ण हो जायेंगी।''

त्वष्टा प्रजापति अदिति एवं कश्यप की संतानों में से एक हैं। असुरों की पुत्री रचना त्वष्टा की पत्नी थी। उनके तीन पुत्र हुए और विश्वरूप उनमें से एक था। अर्थात् विश्वरूप का जन्म असुरों की पुत्री से हुआ था। फिर भी ब्रह्माजी ने देवताओं को विश्वरूप की शरण लेने का आदेश दिया। अपनी माता की वंशावली के कारण विश्वरूप असुरों के शुभेच्छु थे, लेकिन देवताओं के द्वारा उनके असुरों के प्रति झुकाव को सहन करने का परिणाम देवताओं के लिए सर्वोच्च था। इसीलिए ब्रह्माजी ने सभी देवताओं को उस समय उनके प्रस्ताव को स्वीकार करने की सलाह दी। ब्रह्माजी के सुझाव के अनुसार सभी देवता विश्वरूप के पास गये और विनम्रता पूर्वक उनकी शरण प्राप्त करने की प्रार्थना की।

''हे प्रिय विश्वरूप! आपकी जय हो! हम सभी देवता तुम्हारे अतिथि बनकर यहाँ आये हैं। हम तुम्हारे पिता तुल्य हैं। हम तुम से एक वरदान माँगने आये हैं। तुम हमसे उम्र में बहुत छोटे हो, लेकिन तुम वेदमंत्रों में निपुण हो इसलिए हमारा तुम्हे दण्डवत प्रणाम करना उचित है। कृपया आप बिना किसी संकोच के हमारे पुरोहित बनना स्वीकार करें।''

देवताओं के निवेदन से अत्यंत प्रसन्न होकर विश्वरूप ने कहा ''हे देवताओं! आप के निवेदन को कोई भी अस्वीकार नहीं कर सकता है। अस्वीकार करने से पूर्व-अर्जित ब्रह्मतेज नष्ट हो जायेगा। मैं आप का पुरोहित बनना स्वीकार करता हूँ। आप सभी मेरे स्वामी के तुल्य हैं। मैं अपने प्राण देकर भी आप की इच्छाओं को अवश्य पूरा करूँगा।'' तब शीघ्र ही उत्तरदायित्व स्वीकार करके विश्वरूप ने पुरोहिती कर्म प्रारम्भ कर दिये।

विश्वरूप ने सुरक्षा के लिए देवताओं को नारायण कवच प्रदान करने का निश्चय किया। उन्होंने इन्द्र को विजय प्राप्ति के विशेष मंत्रोच्चारणों की संपूर्ण विधि समझाई। उन्होंने इन्द्र से कहा ''हमने तुम्हारी विजय के लिए यह अद्भुत नारायण कवच तुम्हे दिया है। इस प्रार्थना से तुम अत्यंत शक्तिशाली बनकर असुरों को पराजित कर सकते हो। इस अद्भुत कवच को पहनने वाला अन्यों को भी मात्र देखकर या उन्हें अपने पैर से स्पर्श करके निर्भयता प्रदान कर सकता है। इस मंत्र की शक्ति किसी को भी निर्भयता प्रदान करके उसे सभी के द्वारा पूज्यनीय बना सकती है।''

इन्द्र उस विशेष नारायण कवच के मंत्रोच्चारण से अत्यंत शक्तिशाली बन गये और उन्होंने असुरों पर आक्रमण करके उन्हें पूरी तरह से परास्त कर दिया। इन्द्र की अपूर्व शक्ति से सभी असुर धूल चाटने लगे। इस प्रकार इन्द्र पुनः ऐश्वर्यवान हो गये। पहले गुरुदेव का अपमान करने से इन्द्र ने सब कुछ खो दिया था, लेकिन बाद में ब्रह्माजी के आदेशानुसार विश्वरूप को गुरुदेव के रूप में स्वीकार करने से उन्हें खोया हुआ गौरव पुनः प्राप्त हो गया। हमारे जीवन में ऐसी है गुरुदेव की शक्ति।

(गतांक से)

सियाराम ही उपाय

शरणागति मीमांसा

सियाराम ही उपेय

(पंचम खण्ड)

मूल लेखक
श्री सीतारामाचार्य स्वामीजी, अयोध्या

प्रेषक
दास कमलकिशोर हि तापडिया
मोबाइल - ९४४९५१७८७९

९४

श्रीमते रामानुजाय नमः

श्री देवराज गुरु कहते हैं कि हे महात्माओं! सच्चे मुमुक्षु लोग इस प्रकार अपने मन को सद्गुरुओं के द्वारा प्राप्त ज्ञान से समझाकर ममकार रूप महाशत्रु से खूब संभल कर रहते हैं। ऐसे संभाले हुए महात्माओं का अहंकार ममकार कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते हैं। बड़ों का कहना भी है कि-

''मोह सकल व्याधिन कर मूला।
तेहिते पुनि उपजै बहु शूला।।''

याने मोह जो है यही सब दुःखों का कारण है इससे अनेक प्रकार के शूल उत्पन्न होते हैं। जिन बड़भागी चेतनों को अनित्य चीजों में व्यामोह नहीं रहता है उन्हीं लोगों को परमार्थ चिन्तन का कुछ अवसर मिलता है। यह मोह मौके के ऊपर मर्म पर बहुत आघात पहुँचाता है। यहाँ इस प्रसंग में देह और देह संबन्धियों पर ये लोग मेरे हैं ऐसा जो मान कर रहना है उसी को मोह शद्व से कह रहे हैं। इसी का नाम उल्टा ज्ञान है। इस प्रकार से मान कर जो सत्संग हीन रहते हैं उनका स्वार्थ, परमार्थ दोनों नष्ट-भ्रष्ट हो जाता है क्योंकि मोह रूप यह एक विष का वृक्ष है, इसका फल महाशोक है जिसके संसर्ग से इस चेतन का मनुष्य जन्म व्यर्थ चला जाता है। मेरा देखा हुआ है कि अच्छे ऐश्वर्यवान एक सज्जन थे। उन्हें कभी सत्संग का मौका नहीं लगा। उनका अपने लड़कों पर हद्द से ज्यादा मोह और अपनापन रहता था। वह यह कभी नहीं समझते थे कि मनुष्य देह पाने का फल परमात्मा की प्राप्ति है। मन मुताबिक स्त्री, पुत्र, धन प्राप्त हो जाना इसको सौभाग्य समझते थे। बेटों में इतना व्यामोह था कि दो दिन के लिये भी किसी गाँव को जाते थे और लड़कों को नहीं देखते थे तो उनके आत्मा में बड़ी अशान्ति पैदा होती थी। कभी सत्संग किये ही न थे जिससे समझ आये कि परमात्मा के अधीन इन परवश चीजों पर हद्द से ज्यादा अपनत्व करके नहीं रहना चाहिये। इन अनित्य चीजों के ऊपर जिसको जितना व्यामोह रहता है उतना ही उनको भयंकर दुःख का सामना करना पड़ता है। अचानक एक रोज बड़े बेटे की मौत हो गई। यह वज्रपात के समान भयंकर शब्द उनके कान में पड़ा। उसकी क्रिया तक उनसे नहीं सुधार पाई। शोक रूपी शत्रु ने इतने जोर से आक्रमण किया कि सुहृदों के अनेक समझाने पर भी किसी प्रकार वह अपने को न संभाल सके। बच्चे के वियोग की चिन्ता के कारण शरीर में केवल हड्डी मात्र शेष रह गई। किसी अनुभवी का कहा हुआ एक पद बहुत यथार्थ है- ''चिंता हम जिसको कहते हैं वो मुर्दों को जलाती है, बड़ी है, इसलिए चिन्ता जो जीतों को जलती है।''

उसका परिणाम यह हुआ कि दो महीने के अन्दर ही देव दुर्लभ मनुष्य देह से उनके आत्मा की बिदाई हो गई। गया हुआ पुत्र तो मिला नहीं और परमार्थ पथ से भी भ्रष्ट हुए। श्री देवराज गुरु कहते हैं कि हे महात्माओं! पूर्वोक्त सज्ञन की इतनी दुर्दशी का मूल कारण विचार करने से यही दिख रहा है कि उन्होंने परमात्मा की जो अमानत चीज थी और अपना हक जिसके ऊपर तिल मात्र भी नहीं था उस पर अपनी मूर्खता वश हद्द से ज्यादा अपनापन मान रखा था। उसके व्यामोह में पागल होकर रहते थे इसीसे उनको

स्वार्थ और परमार्थ दोनों से भ्रष्ट हो जाना पड़ा। ये भी यथार्थ ही, जो दूसरे की अमानत चीज पर अज्ञानता वश अपना हक कायम रखेगा उसकी चाहे जितनी दुर्दशा हो सकती है। इसमें परमात्मा क्या करें। इस चेतन का सच्चा सहायक और सच्चा बन्धु एक परमात्मा ही हैं और वह अनादि से हैं और अनंतकाल तक रहेंगे। बाकी जितने हैं ये हमारे साथ न आदि में थे न अन्त में रहेंगे। अतः इन लोगों से जितना बने अन्तःकरण से व्यामोह छोड़ कर रहो। जितना बने वैराग्य करके रहो। क्योंकि ये कोई भी आत्मा के सच्चे बन्धु नहीं हैं। बीच ही में मिले और बीच ही में छूट जाने वाले हैं। इनके साथ रहते हुए भी इनमें हार्दिक स्नेह मत करो। इनको तुम जो हृदय से सहायक मान रखे हो यह तुम्हारी भूल है। जो गर्भ में सहायक हुआ सदा के लिये सच्चा सहायक वही है। यह सब जुटान तुम लोगों के प्रारब्ध के द्वारा परमात्मा की तरफ से किया गया है। तुम्हारी इच्छा बिना भी परवश ये सब छूट जाने वाले हैं। यदि इस प्रकार से भी शास्त्रों के बार-बार समझाने पर अपनी मूर्खतावश इन अनित्य चीजों पर पशुओं के समान अत्यन्त स्नेह करके रहोगे तो तुम्हारी मूर्खता का फल तुम्हें ही भोगना पड़ेगा। जिन लोगों ने सत्संग का उपमान किया और इन अनित्य चीजों पर ज्यादा प्रेम किया उनको दुःख और भयंकर शोक भोगने के सिवाय और कुछ हाथ नहीं लगा। इस प्रकार बारम्बार शास्त्रों के द्वारा बड़े-बड़े अनुभवी महात्मा लोग हम जीवों पर कृपा करके चेतावनी दे चुके हैं। इतने पर भी जो हद्द से ज्यादा व्यामोह करेंगे उन्हें भोगना हीं पड़ेगा।

श्री देवराज गुरु कहते हैं कि हे महात्माओं! इसी प्रकार एक ग्राम में देखा था कि एक महात्मा का शिष्य बड़ा सुपात्र हुआ, उसके ऊपर भी वह हद्द से ज्यादा अपनापन मान बैठे थे। एक दिन फुलवारी में उस शिष्य को एक बहुत जहरीला सर्प काट लिया और अनेक उपाय करने पर भी नहीं बचा। उसके गुरु की यह दशा हुई कि पाठ-पूजन, जप-तप सब छूट गया और परिणाम यह हुआ कि कुछ दिनों बाद उनका भी शरीरान्त हो गया। उस शिष्य का वियोग उन से नहीं सहा गया। इस प्रकार अनेक प्रसंग है। इस हम सच्चे मुमुक्षुओं को इस परमात्मा के अमानत चीजों पर से ममकार यानी अपनापन हटाकर ही रहना चाहिए। न इस अनित्य चीजों के मिलने से अपने को कृत्य-कृत्य मानता चाहिए न इनके वियोग होने पर पूर्वोक्त दो सज्जनों के समान शोक ग्रस्त ही होना चाहिए। इस प्रकार यदि अहंकार ममकार रूप दोनों शत्रुओं से सदा हमलोग संभालकर रहेंगे तो हमें देव दुर्लभ मनुष्य देह पाने का क्या फल है उसके विचार करने का अवसर मिलेगा। मुमुक्षुओं को एक बात और भी ध्यान रखने की बड़ी जरूरत है। वह यह है कि जो लोग मुक्ति स्थान को अवश्य जाने की इच्छा करने वाले बड़भागी चेतन हैं उन्हें परमात्मा में, परमात्मा को बतानेवाले शास्त्रों में, परमात्मा के दिव्यस्थान परंधाम में, इन सबों में दृढ़ता कराने वाले गुरुवर्यों में, अपने इष्टदेव के मन्त्रों में सद्गुरुओं के वचनों में पूर्ण विश्वास करके रहना चाहिए। इन सबों में कभी तर्क-वितर्क नहीं करना चाहिए न कभी संशय करना चाहिए। शास्त्रों में, परमात्मा में, सद्गुरुओं में, उनके वचनों में, जिसका विश्वास जितना अधिक होता है, उतनी ही जल्दी उसको उतनी सिद्धि प्राप्त होती है। जैसा कि कहा है कि-

''यस्य यावाँश्च विश्वासः तस्य सिद्धस्तु तावती।''

इन पूर्वोक्त चीजों पर अचल, मजबूत विश्वास से ही सफलता प्राप्त होती है और शास्त्रों में, भगवान में, सद्गुरुओं के उपदेश में, जब तक जिसको संशय बना रहता है तब तक उसको सिद्धि प्राप्त नहीं होती। कहा भी है कि -

''कवनेउ सिद्धि कि बिन विश्वासा।''

(क्रमशः)

श्री प्रपन्नामृतम्

(९वाँ अध्याय)

मूल लेखक - श्री स्वामी रामनारायणाचार्यजी

प्रेषक - श्री रघुनाथदास रान्दड

मोबाइल - ९९००९२६७७३

(गतांक से)

श्री यामुनाचार्य का निधन

शिष्यों के साथ कांचीपुरी से श्रीरंगम् लौटकर भगवान यामुनाचार्य वहाँ श्रीरामानुजाचार्य के योग-क्षेम का पता लगाते हुए निवास करने लगे। जब उन्होंने सुना कि श्रीरामानुजाचार्य श्री यादवप्रकाशाचार्य के यहाँ का अध्ययन छोड़कर हस्तिगिरि निवासी भगवान की स्वर्ण-कलश द्वारा शालकूप से लाकर जल प्रदान की सेवा में निरत हैं तो अपने शिष्य श्री महापूर्णाचार्य स्वामीजी को स्वरचित ''आलवन्दार'' स्त्रोत्र को देकर बोले- कांचीपुरी जाकर भगवान वरदराज को इस स्त्रोत्र का पाठ सुनाओ। भगवान यामुनाचार्य की आज्ञा पाकर श्री महापूर्ण स्वामीजी शीघ्र ही कांचीपुरी आकर भगवान वरदराज की सन्निधि में साष्टांगप्रणिपात करके स्तोत्ररत्न का पाठ करने लगे। तदनन्तर भगवान वरदराज का विज्ञापन कर भक्ति भावना से परिपूर्ण तीर्थ-तुलसी-शठकोपादि ग्रहण करके वे भगवान रामानुजाचार्य का वृत्तान्त सुनने की इच्छा से श्री कांचीपूर्ण स्वामीजी के सन्निधि में आकर और सुनकर अनुसन्धान करते हुए भगवान वरदराज की सन्निधि में पाठ कर ही रहे थे कि श्रीरामानुजाचार्य स्वर्णकुम्भ में जल लेकर भगवान वरदराज के मंदिर में जल-सेवार्थ आये। यहाँ उन्होंने उपर्युक्त स्तोत्र का सुस्वर पाठ करते हुए श्री महापूर्णाचार्य स्वामीजी को देखा। इस स्तोत्र के -

स्वाभाविकानवधिकातिशयेशितृत्वं,
नारायणः त्वयि न मृष्यति वैदिकः कः।
ब्रह्मा शिवाश्शतमखः परमस्वराडित्येतेऽपि
यस्य महिमार्णवविप्रुषस्ते।।

अर्थात् भगवान नारायण! कौन ऐसा वैदिक होगा जो भगवदतिरिक्त (आपको छोड़कर दूसरे) में स्वाभाविक अनवधिकातिशय ईशितृत्व (शासन कर्तृत्व) की मानेगा, जब कि ब्रह्म, शिव, इन्द्र यहाँ तक कि मुक्त पुरुष भी आपके महिमारूपी समुद्र के जल की एक बूँद की ही तरह है। इस श्लोक को सुनकर श्रीरामानुजाचार्य ने आश्चर्यान्वित होकर श्रीमहापूर्णाचार्य स्वामीजी से पूछा-विप्रवर्य! आप जिस स्तोत्र का पाठ कर रहे हैं उसके प्रणेता कौन हैं?

श्रीरामानुजाचार्य की शुद्ध भावनाभरी वाणी सुनकर श्रीमहापूर्णाचार्य स्वामीजी बोले- श्रीरंगम् के ब्राह्मण वंश में उत्पन्न, पंचसंस्कार-संस्कृत, सदाचारी, सकलशास्त्र-तत्त्वज्ञ, जितेन्द्रिय, सात्विक, सन्यासी भगवान यामुनाचार्यजी द्वारा प्रणीत यह स्तोत्ररत्न है।

श्री महापूर्णाचार्य स्वामीजी का उत्तर सुनकर श्रीरामानुजाचार्य स्वामी बोले - ''श्रीमान्! मैं आपके साथ चलकर उनका दर्शन करना चाहता हूँ।'' श्रीरामानुजाचार्य की वाणी सुनकर श्री महापूर्णाचार्य स्वामीजी श्री कांचीपूर्ण स्वामीजी से आज्ञा लेकर उनके साथ श्रीरंगम् आने के लिए तैयार हो गये। श्री रामानुजाचार्य ने भी श्री वरदाज भगवान को स्वर्ण कलश से जल समर्पण करके आज्ञा ली और श्री कांचीपूर्ण स्वामी से भी आज्ञा लेकर, श्रीरंगक्षेत्र के लिए प्रयाण किया।

श्री महापूर्ण स्वामीजी के साथ श्रीरामानुजाचार्य को श्री यामुनाचार्य के दर्शनार्थ आते हुए जानकर भगवान रंगनाथ ने सोचा कि - ''यदि श्रीरामानुजाचार्य की श्री यामुनाचार्य से मुलाकात हो गयी तो हमारी लीला-विभूति ही नष्ट हो जायेगी।'' अतः उन्होंने अर्चक द्वारा भगवान यामुनाचार्य को कहलावा दिया कि - ''यतिवर! आज मैं आपको परमपद प्रदान करता हूँ।''

भगवान रंगनाथ की आज्ञा सुनकर यामुनाचार्यजी रामानुज को देखने की इच्छा से उन्हें साष्टांग प्रणिपात करके बोले - ''भगवान! आज के आठवें दिन मैं परमपद जाना चाहता हूँ।'' इस तरह भगवद्विज्ञान करके वे अपने मठ में जाकर रामानुजाचार्य की शीघ्रातिशीघ्र आने की प्रतीक्षा करने लगे, किन्तु श्रीरामानुजाचार्य के नहीं पहुँच पाने के कारण अपनी अभिलाषा को अपूर्ण देखकर श्रीयामुनाचार्य स्वामी ने स्वाचार्य सेवित परमपद प्रयाण करना पड़ा।

श्री महापूर्णाचार्य स्वामीजी के साथ कावेरीतट पर आकर श्रीरामानुजाचार्य ने देखा कि बालुकाराशि पर ब्राह्मणों का वृहद् समुदाय इकट्ठा है। रास्ते में आते हुए लोगों से पूछने पर श्रीरामानुजाचार्य के साथ महापूर्ण स्वामीजी को पता चला कि आज उनके गुरुदेव (श्री यामुनाचार्य स्वामीजी) इस लीला विभूति में विद्यमान नहीं रहे। इस महा क्षोभकारक वाणी को सुनकर ये दोनों वैष्णववर्य बेहोश होकर गिर पड़े। महाप्रज्ञ श्री महापूर्णाचार्य स्वामीजी किसी तरह गुरु वियोगजन्य दुःख को सहन करते हुए धैर्यपूर्वक श्रीरामानुजाचार्य से बोले- ''विद्वद्वरेण्य रामानुज! आप उठें, अब अधिक सन्ताप से कोई लाभ नहीं। ब्राह्मणों की टोली गरुदेव यामुनाचार्य को समाधि देने के कृत्यों को कर रही है। अतः हम लोगों को उनके समाधि प्राप्त करने से पूर्व ही चलकर उनका अन्तिम दर्शन कर लेना चाहिए। आप जिन यामुनाचार्य के दर्शन के लिए मुक्तिप्रदायिनी सत्यवती क्षेत्र को एवं भगवान वरदराज को जलप्रदान की सेवा को छोड़कर यहाँ आये, वे आज इस लीला विभूति की विभूति न रहे, यह दैवी विधान के अतिरिक्त कुछ नहीं हैं। संसार में प्राप्त सुख-दुःख, लाभ-हानि, संयोग-वियोग एवं जन्म-मरण सब में दैव ही कारण बनता है।'' उपर्युक्त वचनों को कहकर, युगान्त में पतित सूर्य की तरह, बीचिविक्षोभ-विहीन समुद्र की तरह, पृथ्वी पर गिरकर सर्प की तरह दीर्घ श्वास लेते हुए, चेष्टाहीन, उत्साह रहित, वेदार्थ भ्रष्ट ब्राह्मण अथवा कीचड़ में फँसे दुःखी हाथी की तरह शोक सागर में निमग्न श्रीरामानुजाचार्य को बाहुयुगल से गाढ़ालिंगन करके श्रीमहापूर्णाचार्य स्वामीजी ने ले जाकर भगवान श्री यामुनाचार्यजी का दर्शन किया।

दीन हृदय से श्रीयामुनाचार्य का अंतिम दर्शन करते हुए श्रीरामानुजाचार्य बोले- ''भगवान! श्री यामुनाचार्य से मेरा वार्तालाप करने का संयोग न प्राप्त होना उसी तरह है जिस तरह कि शूद्रों को बड़ों की संगति रूप अप्राप्ति। वैष्णवों! यदि मैं इनसे बातें कर पाता तो यह निश्चय था कि इस लोक निवासी संसारियों को परमपद प्राप्ति के लिए एक ऐसा शाश्वत सोपान का निर्माण कर देता कि उस पर चलकर सभी जीव उस अक्षयपद की प्राप्ति कर लेते।'' अपने हृदय के उद्गारभूत उपर्युक्त

बातों को कहकर श्रीरामानुजाचार्य ने श्री यामुनाचार्य की मुड़ी हुई तीन उँगलियों को देखकर तत्रस्थ लोगों से पूछा - ''भगवान् यामुनाचार्य की ये उँगलियाँ क्या जन्म से ही मुड़ी हुई हैं? कि आप ही मुड़ गई हैं।'' श्रीरामानुजाचार्य की वाणी सुनकर आश्चर्यचकित वैष्णवों ने देखकर कहा- ''नहीं, ये उँगलियाँ आज ही मुड़ी हैं, किन्तु इससे किसी खास कारण की प्रतीति नहीं होती।'' श्रीवैष्णवों की वाणी सुनकर परार्थवेत्ता भगवान यामुनाचार्य के अभिप्राय को जानने वाले श्रीरामानुजाचार्य ने प्रतिज्ञा की कि- ''मैं वैष्णवमत का अवलम्बन करके अज्ञान मोहित संसारियों को पंच संस्कार संपन्न, द्रविड वेद पारंगत एवं प्रपत्ति धर्म संलग्न करके उनकी संसार सागर से सदा रक्षा करूँगा।'' श्रीरामानुजाचार्य के द्वारा इस प्रतिज्ञा को करते ही भगवान यामुनाचार्य की एक उँगली तुरंत ही सीधी हो गयी।

इसके बाद श्रीरामानुजाचार्य ने दूसरी प्रतिज्ञा की कि - ''मैं सम्पूर्ण उपनिषद्तत्त्वों का संग्रह करके श्रीभाष्य की रचना करूँगा।'' उनकी इस दूसरी प्रतिज्ञा को करते ही भगवान यामुनाचार्य की दूसरी उँगली भी सीधी हो गई।

श्रीरामानुजाचार्य की - ''सांसारियों पर कृपा करके जीव, ईश्वर इत्यादि के स्वभाव, (इनके द्वारा परमपद प्राप्ति के, उपाय (भूत अर्चिरादि मार्ग रूप) गति के निर्देशमय पुराणरत्न (विष्णु पुराण) के रचयिता श्री पराशर ऋषि के निष्क्रियार्थ किसी महाप्राज्ञ श्रीवैष्णव का विष्णुपुराण के नाम पर नाम (श्रीविष्णुचित्त स्वामी) रखूँगा।'' यह प्रतिज्ञा सुनकर भगवान यामुनाचार्य की तीसरी उँगली भी सीधी हो गयी।

श्रीरामानुजाचार्य की प्रतिज्ञा और यामुनाचार्य की उंगलियों से सम्बद्ध घटना को देखकर उन्हें पुरुषोत्तम मानने वाले वैष्णवों से श्रीरामानुजाचार्य बोले- ''वैष्णवों! यह मेरा महान् प्रमाद है कि अब तक मैं श्री यामुनाचार्यजी को जानता तक नहीं था। चूंकि भगवान रंगनाथ को मुझ पर करुणा भी नहीं आयी, अतः मैं यहाँ से कांची जाऊँगा।'' फिर यह कहकर वे जाने के लिए शीघ्र ही तैयार हो गये। उन्हें शीघ्रता करते देख तत्रस्थ वैष्णवों ने कहा- ''विज्ञवर रामानुजाचार्य! आप यामुनाचार्यजी के दर्शनार्थ दूर से आये हैं, अतः भक्तवत्सल भगवान श्रीरंगनाथ का दर्शन कर रात्रि में निवास करके कांची जायें।''

इनको उत्तर देते हुए श्रीरामानुजाचार्य बोले- ''विप्रवर्य! जिन निर्दयी भगवान रंगनाथ को सुझ पर कुछ भी दया नहीं आयी और उन्होंने मेरी यामुनाचार्य के दर्शन की लालसा को ही नष्ट कर दिया अब उनका मैं दर्शन बिल्कुल भी नहीं करना चाहता हूँ। जहाँ की भूमि में आज मेरे गुरुदेव यामुनाचार्य नहीं रहे, वह भूमि भगवान रंगनाथ से संसेवित रहने पर भी मुझे अच्छी नहीं लगती। अतः मैं अब यहाँ पर क्षण भर भी नहीं ठहर सकता हूँ।''

इस तरह ब्राह्मणों से अनुमति लेकर श्रीरामानुजाचार्य कावेरी नदी को पार करके सत्यवती क्षेत्र की क्षीरवती नदी में यामुनाचार्य के वियोगजन्य दुःख तथा मार्ग-श्रम को स्नान द्वारा नष्ट करके, देवर्षि पितृ-तर्पण करने के पश्चात् वस्त्र धारण कर, मूल मन्त्र का जप करके तिलक धारण किया। वहीं नित्यकृत्य निर्वाह करके क्षीरवती नदी को पार कर वे वरदराज भगवान की निवास भूमि कांचीपुरी आये। कांचीपुरी में भगवान वरदराज को साष्टांग एवं स्तोत्र पाठ निवेदन कर उन्होंने अपने घर आकर अपनी पत्नी के साथ सुखपूर्वक रात्रि व्यतीत की।

।। श्रीप्रपन्नामृत का ९वॉ अध्याय पुर्ण हुआ ।।

क्रमशः

(गतांक से)

श्री रामानुज नूट्रन्दादि

मूल - श्रीरंगामृत कवि विरचित

प्रेषक - श्री श्रीराम मालपाणी
मोबाइल - ९४०३७२७९२७

शोल्लार् तमिळोरु मून्नुम्, शुरुतिहळ् नान्गुम्
एल्लैयिल्ला वरनेरि यावुम् तेरिन्दवन्, एण्णरुम् शीर्
नल्लार् परवु मिरामानुजन् तिरुनामम् नम्बि
कल्ला रहलिडत्तोर्, एदु पेरेन्नु कामिप्परे ॥४४॥

महाप्राज्ञसद्बृन्दसंसेवितो रामानुजः त्रिविधद्राविडशास्त्राभिज्ञः; अधीतश्रुतिचतुष्टयः, अनवधिकधर्मशास्त्रवेत्ता। एवं नाम सर्वज्ञस्याप्यस्य गुरुसार्वभौमस्य दिव्यं नाम न संकीर्तयन्ति संसारिणः। असावेव परम पुरुषार्थ इत्यनवधारणेन 'को नामास्माकं पुरुषार्थ' इति चिन्तादन्तुरस्वान्ताश्च ताम्यन्ति हन्त ते॥ (इयल्तमिळ्, इशैत्तमिळ्, नाडहत्तमिळ् इति द्राविडशास्त्रत्रैविध्यं बोध्यम्॥)

समस्त सज्जनों से संस्तुत श्रीरामानुजस्वामीजी तीन प्रकार के द्राविडशास्त्रों, चार वेदों और अपरिमित धर्मशास्त्रों के वेत्ता हैं। संसारी लोग तो (ऐसे सकल शास्त्रवेत्ता एवं) असंख्येय कल्याण गुण विभूषित इनके नामसंकीर्तन नहीं करते; और (यह अर्थ भी नहीं जानते हुए कि यह नामसंकीर्तन ही परम पुरुषार्थ है) यों चिंता करते-करते दुःख पाते हैं कि हमारे योग्य पुरुषार्थ कौनसा है॥ (विवरण - तीन प्रकार के द्राविड शास्त्र ये हैं इयल् तमिळ, इशैत्तमिळ्, नाडहत्तमिळ्, अर्थात् गद्य, पद्य व नाटक।)

क्रमशः

युवता

भगवद्गीता और नौजवान

दिव्य गुणों द्वारा कष्टों से मुक्ति

तेलुगु मूल - डॉ.वैष्णवाँघ्रि सेवक दास

हिन्दी अनुवाद - श्री अमोघ गौराँग दास

मोबाइल - ९८२१९१४६४२

प्रत्येक व्यक्ति को स्वाभाविक रूप से आनन्दमय होना चाहिए। उन्हें प्रचुर प्रेमभाव रखते हुए सर्वत्र प्रेम फैलाना चाहिए। लेकिन यह आत्मिक स्तर पर स्थित होनेवाले व्यक्ति के लिए ही सम्भव है। वास्तव में ९५% से ९९% लोग केवल दुःखों एवं कष्टों के साथ ही जीते हैं। दुःखों का कारण या तो लोग स्वयं होते हैं या फिर उन्हे बाह्य कारणों से दुःख प्राप्त होते हैं। कारण कुछ भी हो लेकिन सच यह है कि किसी भी जाति, वर्ग, लिंग, आयु, देश एवं धर्म के अधिकतर मनुष्य दुःखपूर्ण जीवन ही जीते हैं। जब अर्जुन को यह भली प्रकार ज्ञात था कि पिछले १३ वर्षों से स्वजन उनसे लड़ रहे थे तब भी युद्धभूमि में उनके लिए दुःखी होने का कारण स्वयं अर्जुन को ही माना जायेगा। भला ऐसी अवस्था में दुःखग्रस्त होने का क्या अर्थ है?

इसीलिए 'भगवद्गीता' से हमें कष्टों के निवारण के अनेक उपाय प्राप्त होते हैं। इनमें से एक उपाय है दिव्य गुणों की प्राप्ति। दिव्य गुणों को प्राप्त करने वाले व्यक्ति की आत्म-शक्ति जाग्रत हो जाती है। एक बार आत्मशक्ति जाग्रत हो जाती है तो संपूर्ण जगत में ऐसे व्यक्ति के प्रति विरोध समाप्त हो जाता है। उस अवस्था में परम सुख का आनन्द लेते हुए ऐसा व्यक्ति निश्चित रूप से सफलता को ही प्राप्त करता है। वे दिव्य गुण क्या हैं? भगवद्गीता १६-१, १६-२,१६-३ में निर्भयता, आत्मशुद्धि, आध्यात्मिक

ज्ञान का अनुशीलन, दान, आत्म-संयम, यज्ञपरायणता, वेदाध्ययन, तपस्या, सरलता, अहिंसा, सत्यता, क्रोधविहीनता, त्याग, शान्ति, छिद्रान्वेषण में अरुचि, समस्त जीवों पर करुणा, लोभविहीनता, भद्रता, लज्ज़ा, संकल्प, तेज, क्षमा, धैर्य, पवित्रता, ईर्ष्यारहित तथा सम्मान की अभिलाषा से मुक्ति को दिव्य गुण बताया गया है। इन दिव्य गुणों में सर्वप्रथम निर्भयता है। निर्भयता का अर्थ है भयरहित रहना या निर्भय होकर चुनौतियों को स्वीकार करना।

इस जगत में अधिकतर लोग भयपूर्ण जीवन बिताते हैं। इसका अर्थ है कि वे मानसिक स्तर पर जीते हैं। लेकिन आत्मा के स्तर पर रहने वाले व्यक्ति प्रेमपूर्ण जीवन जीते हैं और सर्वत्र प्रेम का संचार करते हैं। हम देख सकते हैं कि अत्यंत कठिन कार्यों में सफल होने वाले व्यक्तियों में प्रचुर निर्भयता पाई जाती है। अतः वे दिव्य गुणों वाले होते हैं। दिव्य गुणों को प्राप्त करने के

कारण वे कष्टों से मुक्त होते हैं। भारत को स्वतन्त्रता दिलाने वाले गाँधीजी, चन्द्रमा पर सबसे पहले पहुँचने वाले व्यक्ति नील आर्मस्ट्राँग, एवरेस्ट की चोटी पर चढ़न वाले पहले व्यक्ति एडमंड हिलेरी या ऐसे अत्यंत कठिन कार्यों में सफलता प्राप्त करने वाले सभी व्यक्तियों में निर्भयता की प्रचुरता देखी जा सकती है। अतः जीवन में आगे बढ़ने के लिए युवाओं को पहले निर्भय बनना चाहिए। मन में पैदा होनेवाले असफलता, हार, अपमान या दुष्प्रयोग के नकारात्मक विचारों से ही भय उत्पन्न होता है। आचार्य चाणक्य के कथनानुसार युद्ध में विजय पहले मन में प्राप्त होती है, न कि युद्धभूमि में। इसी प्रकार युद्धभूमि की ओर जा रहे योद्धा, किसी नियुक्ति हेतु इण्टरव्यू देने जा रहे व्यक्ति या फिर परीक्षा कक्ष में प्रवेश कर रहे विद्यार्थी की विजय या पराजय सदैव पूर्व निर्धारित होती है। वास्तविक कार्य को करने से बहुत पहले मन में ही उस कार्य में प्राप्त होने वाली सफलता या असफलता का निर्धारण हो जाता है। एक योद्धा, नौजवान या विद्यार्थी के विजय पाने के बारे में अश्वस्त होने पर वह निश्चित रूप से विजयी होता है। इस प्रकार निर्भयता की दिव्य गुण पूर्ण अवस्था में वह अपने कार्यों में सफल हो जाता है। विश्व के महान ऑटोमोबाइल उद्योगपति हेनरीफोर्ड के कथनानुसार ''तुम्हारा कहना कि मैं सफल बनूँगा या मैं असफल रहूँगा - दोनों ही सच है।'' अतः अपनी विजय या पराजय निर्धारित करने वाले वास्तव में स्वयं तुम ही हो। भगवद्गीता से दिव्य गुणों को प्राप्त करने वाला व्यक्ति विजयी हो जाता है। अन्यथा मन के जाल में फंसने वाले व्यक्ति को निश्चित रूप से पराजित होना पड़ता है। भगवद्गीता के १६वें अध्याय के प्रथम तीन श्लोकों का प्रतिदिन तीन बार गायन करने वाले व्यक्ति को निश्चित रूप से दिव्य गुणों की प्राप्ति होती है। इस प्रकार कोई भी व्यक्ति दिव्य गुणों को प्राप्त करके कष्टों से मुक्त हो सकता है और जीवन के सभी क्षेत्रों में सफलता प्राप्त कर सकता है।

तिरुमल तिरुपति घाट रोड में यान करनेवाले यात्रियों के लिए विज्ञापन

नीचे सूचित समयों के बीच वाहनदारों का प्रवेश रद्ध कर दिया गया है।

१. द्विचक्रवाहन - रात ११.०० बजे से प्रातःकाल ४.०० बजे तक

२. अन्य वाहन (कार और बस) - अर्धरात्रि १२.०० बजे से प्रातःकाल ३.०० बजे तक

३. कुछ अनिवार्य कारणों के कारण उपर्युक्त समयों में परिवर्तन होने की संभावना है।

सूचना - तिरुमल-तिरुपति घाट रोड से यात्रा करनेवाली मोटर घाडीवालें अपना वाहनों से संबंधित 'बार कोड रसीद' को स्कॉनिंग करना अनिवार्य है।

(गतांक से)

दिव्यक्षेत्र तिरुमल

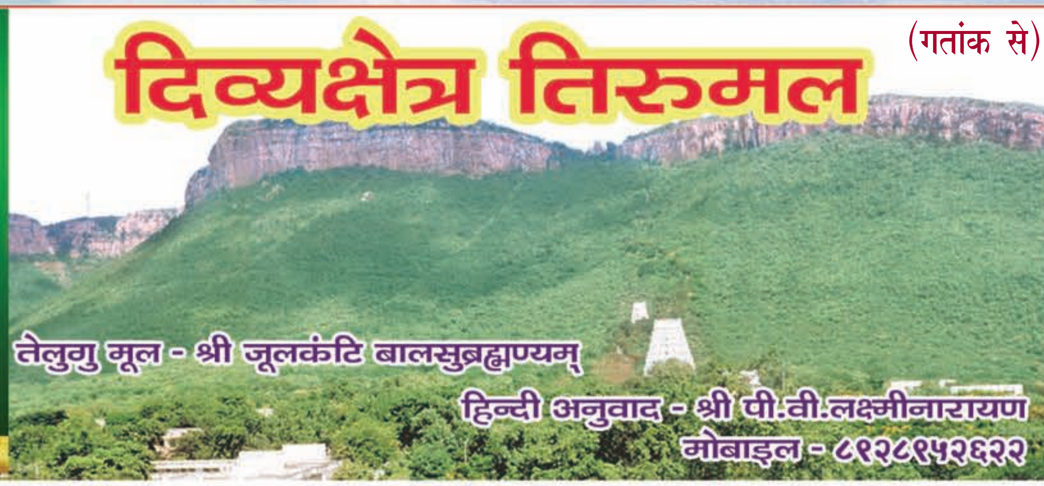

तेलुगु मूल - श्री जूलकंटि बालसुब्रह्मण्यम्
हिन्दी अनुवाद - श्री पी.वी.लक्ष्मीनारायण
मोबाइल - ८९२८९५२६२२

श्रीवेंकटेश भगवान के इस आश्वासन से कि हर कोई भक्त जो उसके दर्शनार्थ तिरुमल में आता है, सो सर्व प्रथम क्षेत्र-पाल श्री वराहस्वामी का दर्शन पायेगा और तत्पश्चात् ही आनंदनिलय में प्रवेश करेगा - वराहस्वामी काफी संतुष्ट हुआ और प्रसन्न चित्त से तिरुमल दिव्यक्षेत्र को श्रीवेंकटेश को धारादत्त कराया!!

दिव्यक्षेत्र तिरुमल के दान के साथ-साथ श्री वराहस्वामी ने श्रीनिवास की सेवा में ''वकुला'' नाम की महिला को नियुक्त किया था।

वकुला अधड़े उम्र की महिला थी।

कौन है यह वकुला? कहाँ से आयी थी? उसका क्या वृत्तांत है? इस सब जानकारी के लिए हमें द्वापरयुग की कथा-वाटिका में प्रवेश करना चाहिए!—

यशोदा - वकुलमाता

कृत, त्रेता, द्वापर तथा कलियुगों में से ''द्वापरयुग'' सर्वश्रेष्ठ माना जाता है क्योंकि, अन्य युगों में अवतार पुरुष श्रीमन्महाविष्णु ने अपने अंश-मात्र अवतारों के साथ जनम लेकर आया और दुर्जन-संहार कर सज्ञनों की रक्षा की थी। मगर द्वापरयुग में ऐसा न होकर, भगवान श्रीकृष्ण साक्षात् गोलोक से अपने यथास्वरूप एवं लीलाविभूतियों के साथ इस धरातल पर जनम लेकर आया था।

द्वापर में भगवान ने प्रत्यक्ष प्रतिभागी बनकर युगनायक के तौर पर युग-निरीक्षण किया और यथापूर्वक अपनी लीलाविभूति का प्रदर्शन किया!! यह द्वापर का सौभाग्य था कि उसकी गोद में वैकुंठवासी परमात्मा ने शिशु बनकर उत्पन्न हो आया, खेला, डोला और बाल्यकाल की विचेष्टाओं से मातृत्व की मधुरिमा में चार चाँद लगाया!!

श्रीकृष्ण का जन्म-वृत्तांत

स्वायंभू-मनु के काल में सुतप नामक एक प्रजापति था, जिसकी पृश्नी नामक साध्वी अर्धांगी थी। पृश्नी-सुतपों ने सुदीर्घ समय महाविष्णु केलिए तपस्या की, तो विष्णुदेव ने उन्हें साक्षात्कार देकर वर दिया कि वह अवश्य उनका पुत्र बनकर जनम ले आयेगा।

इसी पृश्नी सुतपों ने अदिति कश्यप बनकर जनम लेकर आये और इन्द्र, सूर्य, चन्द्र आदि अनगिनत देवताओं को अपने गर्भ से जनम दिया था।

ये ही पृश्नी-सुतप देवकी और वसुदेव बनकर द्वापरांत में व्रजभूमी में पैदा हुए। देवकी राजा देवक की पुत्री थी। देवक मधुरा के राजा उग्रसेन का बड़ा भाई था।

मारिषा और देवमीढ़ नामक दंपतियों में राजा वसुदेव का जनम हुआ था। वसुदेव ने राजा देवक की पुत्री देवकी से विवाह किया। मधुरा के राजा उग्रसेन का कंस नामक पुत्र था, जो राक्षस के अंश से जनम हुआ था। मरण भय से कंस ने अपनी बहिन देवकी और बहनोई वसुदेव को कारागृह में बंद कर दिया।

उसी कारागृह में देवकी वसुदेवों को ''श्रीकृष्ण'' का जनम हुआ। शिशु के संरक्षणार्थ वसुदेव ने यमुना किनारे स्थित व्रजभूमि के गोकुल में राजा नंद के घर श्रीकृष्ण को छोड़ आया था। नंदगोप की पत्नी यशोदा या जसुमति थी, जिसने श्रीकृष्ण को बड़े लाड़ प्यार के साथ पाल-पोस कर बड़ा किया था।

कृष्ण का सगा मामा कंस ने अनुमान लगाया था कि जरूर अपना भाँजा नंदराजा के घर नंदगोकुल में पल रहा है। अतः श्रीकृष्ण और बलराम को प्रकट कर, बाहर खींचने के लिए, कंस ने मथुरा नगरी में धनुर्याग आयोजित करके उन दोनों गोपबालकों को आह्वान भेजा। श्रीकृष्ण और बलराम सात-आठ सालों की आयु में माता जसुमति को छोड़ कर मथुरानगर चले गये। और, वहाँ के घटे परिणामों के अनुसार वापस नंदव्रज में न आ सके। राजकाज ने उन्हें विवश कर दिया था।

और, यहाँ माता यशोदा पुत्र के अभाव में, पुत्र के प्रेम से वंचित रह गयी। इस बात को लेकर किसी समय श्रीकृष्ण ने अपनी माँ को वादा किया था कि वह अपने अगले जनम में अवश्य उसकी सेवा-सुश्रूषा कर उसका ऋण चुकायेगा।

श्रीनिवास और वकुलमाता

श्रीमहाविष्णु जब अपनी प्रियपत्नी महालक्ष्मी का हृदय में ध्यान करते वल्मीक में निर्लिप्त बैठा हुआ था, तो राजा आकाश के चरवाहे की कुल्हाड़ी उस पर चल गयी थी। महाविष्णु के सिर पर चोट लग गयी थी, जिसे हाथ से ढँक कर वह सीधे तिरुमल से आग्नेय दिशा में अरुणानदी के तट पर एक आश्रम या पर्णकुटी में चला आया और वहाँ बेहोश होकर गिर पड़ा था।

अरुणानदी तिरुमल दिव्यक्षेत्र की आग्नेय दिशा में वराहक्षेत्र में बहती थी और आज भी जरा सा लुप्त हो कर एक बड़े नाले के रूप में सुवर्णमुखी नदी से दक्षिण पार्श्व पर उससे समानांतर तौर पर बहती है।

इसी अरुणानदी के किनारे पर वकुलमाता का आश्रम था। वकुलमाता एरुकलसानी (लोगों को अपना भविष्य बताते फिरने वाली एक घुमक्कड़ जाति की स्त्री) थी। हमें यह नहीं मालूम पड़ता कि उसका पति कौन था; उसके बाल-बच्चे भी थे; और उसका परिवार भी था या नहीं। और, आज भी राजा आकाश की नगरी ''नारायणवनम्'' से एक किलोमीटर के फासले पर बहती अरुणानदी के किनारे पर एक ''एरिकम्बट्टू'' नामक छोटा सा गाँव है, जिसके बसने वाले सबके सब एरुकल कुल के लोग है। आर्थात् - यह एरुकम्बट्टू गाँव बहु प्राचीन तथा प्रायः श्रीनिवास के काल से यहाँ विराजमान है।

ऐसे वकुलमालिका की पर्णकुटी के प्रांगण में श्रीनिवास के बेहोश हो कर गिर पडते ही, वहाँ की परिचारिकाओं ने उसे तुरंत आश्रम में ले गयीं, एक आरामदेयी पलंग पर लिटाया और वकुलमालिका को इसकी सूचना दी। वकुलमालिका तुरंत वहाँ चली आयी। श्रीनिवास को ताकती रह गयी वकुला, क्योंकि उसके पिछले जनम की कुछ स्मृतियाँ ताजा हो गयी थीं। उसे धीरे-धीरे याद हो आया कि वह जसुमती बनकर नंद-गोकुल में बसने लगी थी और अपना लाड़ला किशन

कन्हैया उसकी गोद में और घर के आंगन में खेल रहा है। वकुलमालिका द्वापर की यशोदा थी।

आज तिरुमल वैकुंठधाम की आग्नेय अग्रणी दिशा में, ४० किलोमीटर की दूरी पर बहती हुई अरुणानदी के तट पर बसने लगी है।

क्या द्वापर की यमुना आज अरुणा बनकर बहने लगी।

चन्द सेवा-सुश्रूषा के उपरांत श्रीनिवास का स्वास्थ्य ठिकाने पर आ गया था। अब दोनों को अपनी-अपनी पूर्व स्मृतियाँ याद हो आयीं। तुरंत दोनों में माँ-बेटे का संबन्ध जागृत होकर कायम रह गया। वकुलमालिका वकुलमाता बन गयी। वकुलमाता ने श्रीनिवासरूपी श्रीकृष्ण को अपनी गोद में लेकर चूम-पुचकारा और उसका माथा सहलाया।

श्रीनिवास के घाव पर ओषधियाँ लगा कर पट्टी बाँध दी गयी।

(क्रमशः)

तिरुमल में दर्शनीय क्षेत्र

स्वामिपुष्करिणी : मंदिर के निकट स्थित यह तालाब अतिपवित्र है। यात्री मंदिर में प्रवेश करने के पूर्व इसमें स्नान करते हैं। आत्मा व शरीर की शुद्धि के लिए यहाँ स्नान करना श्रेष्ठ है।

आकाश गंगा : मंदिर की उत्तरी दिशा में लगभग ३ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

पापविनाशनम् : मंदिर की उत्तरी दिशा में ५ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

वैकुंठ तीर्थ : मंदिर की ईशान दिशा में लगभग ३ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

तुम्बुरु तीर्थ : मंदिर की उत्तरी दिशा में १६ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

भूगर्भ तोरण (शिलातोरण) : यह अपूर्व भूगर्भ शिलातोरण मंदिर की उत्तरी दिशा में १ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

ति.ति.दे. बगीचे : देवस्थान के आध्वर्य में सुंदर व आकर्षक बगीचे लगे हुए हैं, जिनमें विशिष्ट पेड व पौधे मिलते हैं।

आस्थान मंडप (सदस हाल) : यहाँ धर्म प्रचार परिषद् के आध्वर्य में धार्मिक कार्यक्रम मनाया जाते हैं। जैसे भाषण, संगीत-गोष्ठी, हरिकथा-गान एवं भजन।

श्री वेंकटेश्वर ध्यान ज्ञान मंदिर (एस.वी. म्यूजियम्) : इस कलात्मक सुंदर भवन में एक म्यूजियम्, ध्यान केंद्र तथा छायाचित्र-प्रदर्शिनी आयोजित है।

ध्यान केंद्र : तिरुमल के एस.वी. म्यूजियम् एवं वैभवोत्सव मंडप में स्थित ध्यान केंद्रों में भगवान पर ध्यान केंद्रित कर भक्त शांति को प्राप्त कर सकते हैं।

जीवन सौख्य की हामी-रुद्राक्ष

- श्री वेमुनूरि राजमौलि
मोबाइल - ८९८५२३९३१३

रुद्राक्ष परम शिव के प्रतिरूप हैं। रुद्राक्ष की माला हाथ में लेकर भगवान का नाम स्मरण करने पर मानव के जीवन में आयुरारोग्य व सुख-संतोष प्राप्त होते है, ऐसा विश्वास प्रचार में है। रुद्राक्ष धारण का आचार प्राचीन काल से चला आ रहा है।

आज, साधारण लोग भी रुद्राक्षों का उपयोग कर रहे हैं। त्रिपुरासुर नामक राक्षस का संहार परमेश्वर ने किया। उस सम शिवजी ने नेत्रों से आनंद-बाष्प पृथ्वी पर टपक पड़े। वे ही रुद्राक्षों के रूप में उद्भव हुए, ऐसी एक पुराण गाथा है। एक अन्य कथन के अनुसार निदित होता है कि रुद्र के अक्षों से उद्भव हुए, इसलिए ये रुद्राक्ष के नाम से व्यवहृत हो रहे हैं।

ये रुद्राक्ष-वृक्ष नेपाल के पंचक्रोशी नामक क्षेत्र में, जलेश्वर महादेव के पुण्य क्षेत्र में, भारत के दार्जिलिंग, कोंकणि, मैसूर, केरल राज्यों में और इंडोनोषिया, जावा-द्वीपों में पाये जाते हैं। ये वृक्ष, आम के पेडों की तरह रहकर, अधिक स्थान घेर लेते हैं। शरत ऋतु में इन वृक्षों में अमरुद के फलों जैसे छोटे-छोटे फल लगते हैं। उन फलों पर था छिलका दृढ़ होकर मोटा होता है। कुछ लोग इन फलों को खाते हैं। ये परमेश्वर के शरीर के प्रतिबिंब होते हैं। अन्दर बेर के आकार में बीज होते हैं। बीजों पर कुछ धारियाँ तथा काँटे होते हैं। वे, उनके मुख कहलाते हैं। साधारणतः रुद्राक्षों के एक से लेकर इक्कीस तक के काँचें याने मुख होते हैं। बड़े आमलक के परिमाण के रुद्राक्ष, श्रेष्ठ रुद्राक्ष कहलाते हैं। बेर के परिमाण में रहनेवाले रुद्राक्ष मध्यम तथा चने की बीजों के परिमाण के रुद्राक्ष निम्न स्थान को प्राप्त रुद्राक्ष हैं; ऐसा कहा जाता है। कहते हैं कि बडे आमलक के परिमाण के रुद्राक्ष, समस्त अरिष्टों को दूर करते हैं। बेर के आकार के रुद्राक्ष जगत में सुख-संतोष पहुँचाते हैं। चने के बीजों के आकार के रुद्राक्षों से बनी रुद्राक्ष-माला वांछित कामनाओं को सफल बनाती है। धागे से गूंथने के अनुकूल जिन रुद्राक्षों में सहज ही छेद बने रहते हों, उन रुद्राक्षों को उत्तम कोटि के रुद्राक्ष माना जाता है। आज-कल मार्केट में नकली रुद्राक्ष बेचे जा रहे हैं। कुछ लोग जंगली बेर अथवा बडे बेर के बीजों को रुद्राक्ष कहकर बेच रहे हैं। दूध या पानी में डालने पर अच्छे रुद्राक्ष डूब न जाकर पानी पर तैरते हैं। अच्छे रुद्राक्षों को ताँबे के तार से गूंथ कर माला बनाये तो रुद्राक्ष अपने ही आप हिलने लगते हैं।

रुद्राक्षों के ओषधीय गुण

शिव पुराण, स्कन्धपुराण, उपनिषद इत्यादियों में रुद्राक्षों की प्रामुख्यता का वर्णन मिलता है। शोधकर्ताओं का कथन है कि रुद्राक्षों से भगवान की पूजा करने के अलावा गले में या हाथों में आभरणों के रूप में धारण करने पर शुभ फल प्राप्त होते हैं क्योंकि उनमें औषधीय गुण विराजमान हैं।

रुद्राक्षों के फल खट्टे होते हैं। इनके खाने से शरीर में गरमी पैदा होती है। वात रोग तथा कफ़ दूर होते हैं।

शिरोरोग भी दूर होते हैं। शरीर में रक्त-प्रवाह ठीक चलता है। रक्तचाप कम होता है। रुद्राक्षों को घिर कर शहद के साथ खाने पर मूर्छा-रोग कम होता है। चेचक से पीडित लोगों को रुद्राक्ष घिस कर, पानी में मिलाकर सेवन कराने पर चेचक की उद्धृति (तीव्रता) घट जाती है। रुद्राक्ष-माला का धारण करने पर क्षय-रोगों को उपशमन मिलता है। रुद्राक्षों को पानी में भिगोकर, उस पानी का सेवन करने से चेचक की बीमारी नहीं लगेगी। रुद्राक्ष आत्म-विश्वास प्राप्त कराता है। मनोबल प्राप्त होता है।

अनुभवी लोगों का कहना है कि नेपाल में मिलनेवाले रुद्राक्षों के धारण करने से हृदय-स्तंबन, रक्तचाप, सिर में रक्तस्त्राव, चर्मरोग, भूतप्रेतादि की पीड़ाएँ दूर हो जाते हैं। तथा अपने देश में मिलने वाले रुद्राक्षों से चक्कर आ जाना, (सिर घूमना), पागलपन, मूर्छारोग कम होते हैं। हमेशा रुद्राक्षों का धारण कर सकते हैं।

यादी दो रुद्राक्ष मिलकर रहे तो वह गौरी-शंकर का प्रतिरूप तथा तीन मिलकर रहे तो त्रिमूर्तियों का प्रतिरूप हैं; ऐसा लोग विश्वास किया करते हैं। मनुष्य के स्वस्थ्य कैसे काम करते है; अनेकों ग्रथों में वर्णन मिलता है। रुद्राक्ष-चिकित्सा द्वारा विविध रोगों को दूर कर सकते हैं। इतना ही नहीं, आज भी अनेकों शास्त्रज्ञ इस विषय पर विस्तृत शोध-कार्य संपन्न करके यह जानने की चेष्टा कर रहे हैं कि विविध रोगों पर ये रुद्राक्ष किस प्रकार काम कर सकते हैं?

साधारणतया पंचमुखी रुद्राक्ष अधिक मात्रा में मिलते हैं। किन्तु इससे कम अथवा अधिक मुखवाले रुद्राक्ष कम मात्रा में मिलते हैं। इनकी कीमत भी ज्यादा होती है। पंचमुखी रुद्राक्ष की कीमत पचास रुपया हो तो इक्कीस मुखवाले रुद्राक्ष का मूल्य एक लाख से भी अधिक हुआ करता है। एक मुखी रुद्राक्ष बहुत कम मात्रा में पाया जाता है। इसका मूल्य भी बहुत अधिक होता है। लोगों का विश्वास है कि इसके धारण करने से जीवन के सभी कोणों में (हर किसी विषय में) भलाई ही भलाई प्राप्त होती है।

रुद्राक्षों के मुख तथा उनके फल

१. एकमुखी रुद्राक्ष - यह ''परम शिवजी'' का प्रतीक है। इसका मिलना बहुत दुर्लभ है। यदि यह मिले तो नियम-पूर्वक ''ओम् ह्रीं नमः'' के मन्त्र का जप करते धारण करना चाहिए। तथा इससे शुभफल प्राप्त होते हैं। धन की कमी नहीं होगी। मानसिक शान्ति प्राप्त होगी।

२. द्विमुखी रुद्राक्ष - दो मुखों वाला रुद्राक्ष ''देवता-स्वरूप'' है। सोमवार के दिन ''ओम् नमः'' मन्त्र का जप करते इसे धारण करना चाहिए। मानसिक शान्ति तथा चित्त की एकाग्रता के लिए यह रुद्राक्ष-माला कितने ही सहकारी सिद्ध हो सकती है।

३. त्रिमुखी रुद्राक्ष - तीन मुखों वाला रुद्राक्ष साक्षात् ''अग्नि-स्वरूप'' है। ''ओम् क्लीं नमः'' के मन्त्र का जप करके सोमवार के दिन इसका धारण करना चाहिए। इसके धारण करने से विद्या की व्याप्ति होगी। शत्रुभय दूर होता है। इसे घिस कर दूध में मिलाकर पीने से नेत्रों की बीमारियाँ दूर होती हैं।

४. चतुर्मुखी रुद्राक्ष - चार मुखों वाला रुद्राक्ष ''ब्रह्मस्वरूप'' है। सोमवार के दिन ''ओम् ह्रीं नमः'' मन्त्र का एक सौ आठ बार जप करके इसका धारण करना चाहिए। कहते हैं कि इसका धारण करने वाले वेदशास्त्र प्रवीण तथा प्रजारंजक बनते हैं। स्मरण शक्ति के साथ-साथ बुद्धि का चातुर्य भी बढ़ता है। गले में

इसका धारण करने से नेत्रों में तेज, कंठ में माधुर्यता आ जाती है। वशीकरण शक्ति बढ़ती है।

५. पंचमुखी रुद्राक्ष - पाँच मुखों वाला रुद्राक्ष ''कालाग्नि-स्वरूपिणी'' है। इसका भी सोमवार के दिन प्रातःकाल के समय ''ओम् ह्रीं नमः'' मन्त्र का जप करके धारण करना चाहिए। कहते हैं कि यह बड़ा शक्तिशाली है। इसके धारण से सर्प, बिच्छू जैसे विषैले प्राणियों का भय नहीं रहता। शत्रु-पीडा कम होकर सुख-शांति प्राप्त होती है।

६. षण्मुखी रुद्राक्ष - छः मुखों वाला रुद्राक्ष ''कार्तिकेय'' का प्रतीक है। ''ओम् ह्रीं हुम नमः'' मन्त्र का पठन करके धारण करना चाहिए। इसके धारण से हिस्टीरिया, मूर्छा रोग, स्त्रियों से संबंधित बीमारियाँ कम होती हैं।

७. सप्तमुखी रुद्राक्ष - सात मुखों वाला यह रुद्राक्ष ''मन्मथ'' का प्रतीक है। ''ओम् हुम नमः'' मन्त्र का जप करके इसका धारण करने पर दरिद्रता नहीं रहेगी। अकाल-मृत्यु प्राप्त नहीं होगी। आयुधों से भी किसी प्रकार की हानि नहीं होगी।

८. अष्टमुखी रुद्राक्ष - आठ मुखों वाला यह रुद्राक्ष ''अष्टमूर्ति भैरव स्वरूप'' है। ''ओम हं नमः'' मन्त्र का जप करके धारण करना चाहिए। व्यापारियों के लिए यह कितने ही प्रयोजनकारी है। स्थिर चित्तता, एकाग्रता के लिए उपयोगी है।

९. नवमुखी रुद्राक्ष - नौ मुखों वाले इस रुद्राक्ष की अधिष्ठान देवता नव (नौ) रूप धारण करनेवाली ''महेश्वरी दुर्गादेवी'' है। ''ओम् ह्रीं हुम नमः'' मन्त्र का जप करके इसका धारण करना चाहिए। जिगर की बीमारी वालों के लिए यह लाभकारी है।

१०. दशमुखी रुद्राक्ष - दश मुखों वाला यह रुद्राक्ष साक्षात् ''विष्णु-स्वरूप'' है। ''ओम् ह्रीं नमः'' मन्त्र का जप करके धारण करना चाहिए। यह कामनाओं की पूर्ति करता है। साधारणतः यह नहीं मिलता।

११. एकादश मुखी रुद्राक्ष - ग्यारह मुखों वाला यह रुद्राक्ष ''रुद्र'' का प्रतिरूप है। ''ओम् ह्रीं नमः'' मन्त्र का पठन करके धारण करनेवालों को सर्वत्र विजय की सिद्धि प्राप्त होती है। स्त्रियों को श्री संपत्तियाँ प्राप्त होती हैं। संतान की प्राप्ति होगी।

१२. द्वादशमुखी रुद्राक्ष - बारह मुखों वाला यह रुद्राक्ष ''सूर्य'' का प्रतीक है। इसे सिर पर धारण करने से सूर्य का तेज प्राप्त होगा।'' ''ओम् क्रौं क्षाम् रौम् नमः'' मन्त्र का जप करके धारण करना चाहिए। चोर, अग्नि, दरिद्रता, बीमारियाँ इत्यादि पीडाएँ दूर हो जाती हैं। कामले की बीमारी वालों के लिए यह प्रयोजनकारी है।

१३. त्रयोदशमुखी रुद्राक्ष - तेरह मुखों वाला यह नक्षत्र ''इन्द्र स्वरूप'' है। ''ओम् ह्रीं नमः'' मन्त्र का पठन करके इसका धारण करना चाहिए। इससे शुभफल प्राप्त होकर कामनाओं की पूर्ति होती है।

१४. चतुर्दशमुखी रुद्राक्ष - चौदह मुखों वाला रुद्राक्ष ''परमशिव'' का प्रतीक है। ''ओम् नमः'' मन्त्र का पठन करके धारण करना चाहिए। यह सर्व-व्याधि-निवारिणी हैं। कितने ही मुखवाले रुद्राक्ष क्यों न हों, उस रुद्राक्ष से संबंधित मन्त्र के जप के बिना रुद्राक्ष का धारण करना नहीं चाहिए।

कुछ भी हो, रुद्राक्ष अन्तःकरण की शुद्धि बढाता है। जीवन में प्रशान्तता प्राप्त कराता है। बीमारियाँ दूर करता है। शुभ फल पहुँचाता है। अतः रुद्राक्षों का धारण करना श्रेयोदायक है।

ओम् शान्तिः शान्तिः शान्तिः

तेलुगु मूल - वाई.वसन्ता।

साभार - वार्ता (दैनिक)।

आइये, संस्कृत सीखेंगे..!!

आयोजक - महामहोपाध्याय समुद्राल लक्ष्मणय्या, श्री किरणभट

हिन्दी में निर्वहण - डॉ.सी.आदिलक्ष्मी
मोबाइल - ९९४९८७२१४९

पाठ - १

स्वरवर्णाः (स्वर)

अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ

ए ऐ ओ औ अं अः

व्यञ्जनवर्णाः (व्यंजन)

क ख ग घ ङ

च छ ज झ ञ

ट ठ ड ढ ण

त थ द ध न

प फ ब भ म

य र ल व श

ष स ह ळ क्ष

शिव-साहित्य की व्यापकता

- प्रो.योगेश चन्द्र शर्मा
मोबाइल - ९८२८६६२२१४

हमारे यहाँ आदिकाल से ही चले आरहे देवताओं में शिव का विशिष्ट स्थान है। विश्व के आदि ग्रन्थ ऋग्वेद में इन्हें 'रुद्र' के नाम से पुकारा गया और उसके 'रुद्र स्तवन' में उनकी विशेष चर्चा की गयी। अन्य वेदों में भी शिव का उल्लेख है और रुद्र के अतिरिक्त उनके अन्य नामों की भी चर्चा वैदिक साहित्य में है। ब्राह्मण तथा अरण्यक ग्रथों में भी शिव के बारे में विशद वर्णन है।

अनेक उपनिषदों में शिव के बारे में विस्तार से चर्चा की गयी है। श्वेताश्वतरोपनिषद तथा नील रुद्रोपनिषद जैसे कुछ उपनिषद तो मुख्य रूप में शिव पर ही आधारित है। शिव-पुराण, लिंग-पुराण, स्कन्द-पुराण, मत्स्य-पुराण, कूर्म-पुराण और ब्रह्माण्ड-पुराण जैसे पुराणों में भी लगभग सभी में शिव तथा शिवलिंग पूजन की चर्चा है। इनमें शिव और पार्वती के बारे में विस्तृत चर्चा है। शैवपुराणों के अतिरिक्त वैष्णव पुराणों में भी शिव पार्वती का पर्याप्त उल्लेख है और उनकी अनेक कथाओं की विस्तार में चर्चा है।

पौराणिक साहित्य में शिव-पुराण विशेष उल्लेखनीय है। इसमें शिव, सती पार्वती, लिंग-पूजन तथा इनसे सम्बन्धित अनेक बातों तथा अन्तर्कथाओं का विस्तृत उल्लेख है। शिवलिंग का निर्माण कैसे और किस रूप में हो, उसका पूजन किस प्रकार से किया जाए तथा इस पूजन से कौन कौन से फल मिलते हैं, इन सब बातों की विवेचना इस ग्रन्थ में की गयी है। लिंग-पूजन की दार्शनिक पृष्ठभूमि और इसके साथ जुड़ी विभिन्न भ्रांतियों को भी इसमें विस्तार से स्पष्ट किया गया है। इसमें किये गए वर्णन के अनुसार शिव-पुराण मूलतः स्वयं शिव द्वारा प्रतिपादित है, जिसे बाद में महर्षि व्यास ने संकलित करके संक्षिप्त रूप प्रदान किया।

शिव-पुराण में किये गए उल्लेख के अनुसार इसमें मूलतः एक लाख श्लोक तथा १२ संहिताएँ (खंड़) थीं। बाद में व्यासजी ने इसे संक्षिप्त रूप देने के लिए इसके श्लोकों की संख्या घटाकर २४ हजार तथा संहिताएँ घटकर सात रह गई, जो इस प्रकार है - विद्येश्वर-संहिता, रुद्र-संहिता, शतरुद्र-संहिता, कोटि रुद्र-संहिता, उमा-संहिता, कैलास-संहिता तथा वायवीय-संहिता।

शिव तथा शिवलिंग पूजन की चर्चा वाल्मीकि रामायण में भी पर्याप्त रूप में की गयी है। रावण महा

शिव-भक्त था और इसलिए उसके प्रसंग में वाल्मीकि रामायण के उत्तरकाण्ड़ में कहा गया है कि 'शिव भक्त रावण जहाँ जाता है, वहाँ स्वर्णलिंग भी जाता है, जिसे बालू की वेदी पर पधारकर वह विधिवत पूजन करता है और लिंग के सामने नृत्य करता है।'

रामायण के उपरान्त तो शिव-साहित्य की बाढ़ सी आगयी। राम और कृष्ण के बाद सर्वाधिक साहित्य-सृजन शिव पर ही हुआ। महाभारत के अनुशासन-पर्व में शिव से सम्बन्धित अनेक कथाओं और उनके हजार नामों की चर्चा है।

कुछ स्मृति ग्रंथों में भी शिव सम्बन्धी उल्लेख काफी अधिक हैं। तन्त्रों में शिव के माध्यम से विभिन्न प्रकार के ज्ञान को उद्घाटित किया गया है। 'लिंगार्चन तन्त्र' में लिंग-पूजन की अर्चना विधि को स्पष्ट किया गया है।

श्री नरहरि स्वामीकृत ग्रन्थ 'बोधसार' में शिव से सम्बन्धित विभिन्न तत्वों का दार्शनिक विवेचन प्रस्तुत किया गया। शिव की बोलास्वरूप, त्रिनेत्रता, भुजंग भूषणता, श्मशान-प्रेम, भस्म और जटाजूट धारण करने की प्रवृति आदि की प्रतीकात्मक व्याख्या करके इस ग्रन्थ में शिव के व्यक्तित्व को एक नये सिरे से देखने का प्रयत्न किया गया।

संस्कृत साहित्य में कुमारसाम्भ्वम, किरातार्जुनीयम, पार्वती-परिणय, स्तुत कुसुमांजलि, शिव महिमा स्तोत्र, शिव-तांड़व स्तोत्र आदि ग्रन्थों का मुख्य विषय शिवोपासना ही है। हिन्दी में भी शिव, शैव धर्म और शिवलिंग पूजन पर या इनसे सम्बन्धित विषयों पर अनेक ग्रंथ लिखे गये तथा अन्य अनेक ग्रंथों में इन विषयों की विस्तृत चर्चा हुई।

शिव से सम्बन्धित साहित्य का प्रसार अत्यधिक व्यापक है। कहीं पर वे आदिदेव के निराकार स्वरूप में प्रकट हुए हैं, कहीं लिंग स्वरूप में और कहीं स्थूल स्वरूप में भी। साहित्य में कहीं उनका योगी स्वरूप उभरा है, कहीं मस्त भोलेभंड़ारी वाला स्वरूप, कहीं नटराज और कलाकार वाला स्वरूप तथा कहीं सत्य के पक्ष में संघर्ष करने वाले शूरवीर का स्वरूप भी। शिव की कथाएँ अनेक हैं और उनसे सम्बन्धित उनके स्वरूप भी अनेक हैं। इससे साहित्य में उनकी छवि भी विविधता को लिये हुए हैं।

श्री वेंकटेश्वर परब्रह्मणे नमः

हिन्दू होने के नाते गर्व कीजिए!

* ललाट पर अपने इच्छानुसार (चंदन, भस्म, नामम्, कुंकुम) तिलक का धारण करें।
* नहाने के बाद निम्न भगवन्नामों से किसी न किसी का एक पर्याय में १०८ बार जप करें।

श्री वेंकटेशाय नमः।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो नारायणाय।

फरवरी महीने का राशिफल

- डॉ.केशव मिश्र
मोबाइल - ९९८९३७६६२५

मेषराशि - धीमी गति से कार्य सिद्ध होंगे। मानसिक स्वास्थ्य पर ध्यान देना चाहिए। माता-पिता एवं परिवारिक लोगों से मतभेद हो सकता है। विद्यार्थियों के लिए अध्ययन में अभिरुचि कम हो सकती है।

वृषभराशि - आय के स्त्रोतों में वृद्धि होगी। नौकरी में लाभ, कारोबार सामान्य रूप से चलता रहेगा। भौतिक सुखों के साधन बनेंगे। वैवाहिक जीवन में सुख-सुविधाओं का लाभ बना रहेगा।

मिथुनराशि - पूर्व में किये गये प्रयासों में सफलता मिलेगी। पारिवारिक जनों का सहयोग मिलेगा। अपने वाणि पर नियंत्रण रखें। सन्तान पक्ष से भावनात्मक लगाव रहेगा।

कर्कराशि - पूर्व में किया गया परिश्रम फलदाता सिद्ध होगा। पारिवारिक लोगों का सहयोग प्राप्त होगा। मित्रों से मनमुटाव के योग हैं।

सिंहराशि - स्थानान्तरण होने की सम्भावना है। मित्रों से लाभ। उदर पीडा, घाव या चोट एवं वात-रक्तदोष से स्वास्थ्यबाधा सम्भावित रहेगी। सन्तान पक्ष के साथ भावनात्मक ताल मेल बनाये रखें।

कन्याराशि - शिक्षा, कृषि, उद्योग एवं व्यापार में बाधा तथा बिलम्ब से आंशिक सफलता मिलेगी। भौतिक सुख साधनों पर अधिक खर्च होगा। व्यापारी वर्ग चिन्तित रहेंगे।

तुलाराशि - घर परिवार का वातावरण सुखमय रहेगा। परिश्रम अधिक करना होगा। कृषि, व्यापार, उद्योग एवं शिक्षा के क्षेत्र में सफलता प्राप्त होगी।

वृश्चिकराशि - किया गया परिश्रम रंग लाएगा, कारोबार व्यापार में वृद्धि होगी, उत्सवों में जाने का अवसर मिलेगा। बौद्धिक कार्यों में सफलता मिलेगी।

धनुराशि - सन्तानसुख अनुकूल एवं पारिवारिक सुख मध्यम रहेगा। भूमि-मकान-वाहन का सुख मध्यम रहेगा। माता-पिता के स्वास्थ्य में परेशानी हो सकती है।

मकरराशि - शिक्षा, उद्योग कृषि एवं व्यापार के क्षेत्र में बाधा तथा विलम्ब से मध्यमस्तर का लाभ होगा। शत्रुओं से सावधान। अपनों के प्रेम में वृद्धि।

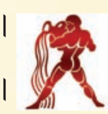

कुम्भराशि - रक्तदोष एवं उदर पीडा सम्भावित रहेगी। सन्तानसुख एवं पारिवारिक सुख मध्यमकोटि का रहेगा। जमीन जायदाद से लाभ के योग। किसी नजदीकी मित्र का सहयोग मिलेगी।

मीनराशि - स्वास्थ्य अनुकूलप्राय रहेगा। नवीन कार्यारम्भ तथा राजनीति के क्षेत्र में सफलता मिलेगी। मंगलकृत्य, धर्मकृत्य, तीर्थाटन तथा पर्यटन का योग लगेगा।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति

सप्तगिरि

(आध्यात्मिक मासिक पत्रिका)

चंदा भरने का पत्र

१. नाम : ....
(अलग-अलग अक्षरों में स्पष्ट लिखें) ....
....
पिनकोड ....
मोबाइल नं ....

२. वांछित भाषा : ☐ हिन्दी ☐ तमिल ☐ कन्नडा ☐ तेलुगु ☐ अंग्रेजी ☐ संस्कृत

३. वार्षिक / जीवन चंदा :

४. चंदा का पुनरुद्धरण :

(अ) चंदा की संख्या :

(आ) भाषा :

५. पेय रकम :

६. पेय रकम का विवरण :

नकद (एम.आर.टि. नं) दिनांक :

धनादेश (कूपन नं) : दिनांक :

मांगड्राफ्ट संख्या : दिनांक :

प्रांत :

दिनांकः चंदा भरनेवाला का हस्ताक्षर

- वार्षिक चंदा : रु.६०.००, जीवन चंदा : रु.५००-००
- नूतन चंदादार या चंदा का पुनरुद्धार करनेवाले इस पत्र का उपयोग करें।
- इस कूपन को काटकर, पूरे विवरण के साथ इस पते पर भेजें–
- संस्कृत में जीवन चंदा नही है, वार्षिक चंदा रु.६०-०० मात्र है।

प्रधान संपादक, सप्तगिरि कार्यालय, के.टी.रोड,
तिरुपति-५१७ ५०७. (आं.प्र)

नूतन फोन नंबरों की सूचना

चंदादारों और एजेंटों को सूचित किया जाता है कि हमारे कार्यालय का दूरभाष नंबर बदल चुका है और आप नीचे दिये गये नंबरों से संपर्क करें–

कॉल सेंटर नंबर
0877 - 2233333

चंदा भरने की पूछताछ
0877 - 2277777

अर्जित सेवाएँ और आवास के अग्रिम आरक्षण के लिए कृपया इस नंबर से संपर्क करें–

STD Code: 0877

दूरभाष :

कॉल सेंटर नंबर :
2233333, 2277777.

भक्तों की सेवा में...

तिरुमल में विशाखा शारदापीठ के अधिपति -

२०१९, दिसंबर १९ (गुरुवार) तिरुमल - श्रीपति दर्शन केलिए तिरुमल को आए हुए विशाखा शारदापीठ के अधिपति श्री श्री श्री स्वरूपानंदेंद्रस्वामीजी को ति.ति.दे. के न्यास-मंडली के अध्यक्ष श्री वाई.वी.सुब्बारेड्डी, अतिरिक्त कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री ए.वी.धर्मारेड्डीजी ने गुरुवार को आदर सहित भेंट हुए। अध्यक्षजी ने मीडिया से बताते हुए कहा है कि - सनातन धर्मप्रचार के अंतर्गत हर महीने तिरुमल एवं तिरुपति में पीठाधिपतियों से धार्मिक कार्यक्रमों का आयोजन करने की बात व्यक्त की।

तिरुपति में नूतन आवास समुदाय का निर्माण -

२०१९, दिसंबर २७ (शुक्रवार) तिरुपति - तिरुमल श्रीपति के दर्शन केलिए आनेवाले भक्तों केलिए तिरुपति में आवास सुविधाओं की व्यवस्था करने के अंतर्गत ति.ति.दे. के न्यास-मंडली के अध्यक्ष श्री वाई.वी.सुब्बारेड्डी ने इंजनीरिंग अधिकारियों सहित अलिपिरि के पास स्थित जमीन को देखा गया।

इस संदर्भ में उन्होंने मीडिया से बताते हुए कहा है कि - तिरुमल में भीड़ अधिक रहने के समय में टाइम स्लॉट नियत करके तिरुपति में भक्तों ने ठहरने केलिए आवास की व्यवस्था को देने केलिए कोशिश कर रही है। इस के अंतर्गत अलिपिरि में निर्माण करनेवाले आवास समुदायों में अन्नप्रसाद, धार्मिक कार्यक्रम, भजन, ध्यान एवं भक्ति संगीत कार्यक्रमों का आयोजन करने के बारे में बताया गया।

तिरुमल के जलाशयों का संदर्शन व परिशीलन -

२०१९, दिसंबर २७ (शुक्रवार) तिरुमल - ति.ति.दे. न्यास-मंडली के अध्यक्ष ने कहा कि आनेवाले दो वर्षों में तिरुमल के जलाशयों में भक्तों केलिए आवश्यक पानी उपलब्ध है। उन्होंने शुक्रवार के दिन अधिकारियों से मिलकर तिरुमल में स्थित कुमारधारा, पसुपुधारा जलाशयों को देखा गया।

इस संदर्भ में उन्होंने मीडिया से बात करते हुए बताया था कि पिछले दस सालों में तिरुमल में स्थित पुलों में पूरी तरह से भरे हुए है। श्रीपति की आशीर्वाद से इस साल विस्तार रूपसे बरसात हुए। उसीके जरिए तिरुमल में रहे कुमारधारा, पसुपुधारा, आकाशगंगा, पापविनाशनम् एवं तिरुपति में स्थित कल्याणी नामक जलाशयों में पूर्णरूप से जल की पूर्ति हुई। अभी पानी बरसने की संभावना होने की वजह पानी का स्थाइत्व बढ़ने की आशंका है। इनके साथ-साथ तिरुमल में हमेशा केलिए पानी की आवश्यकताओं की पूर्ति करने केलिए चार सौ करोड रूपायों से बालाजी जलाशय के पानी को उपयोग करने के लिए ति.ति.दे. के न्यास-मंडली ने अनुमोदन किया गया।

तिरुमल को आनेवाले भक्त जलप्रसाद को स्वीकार करने केलिए सुरक्षित पानी देने केलिए कार्रवाई की गई। आनेवाले संक्राति से तिरुमल में प्लास्टिक बोतलों एवं थैलियों का निषेध करने की बात व्यक्त किया गया।

वेंकटाचल माहात्म्य कथा चित्रों का विमोचन -

२०१९, दिसंबर २८ (शनिवार) तिरुमल - वेंकटाचल माहात्म्य में श्रीनिवास वृत्तांत को बताते हुए बनाए गए चित्रकारिता को ति.ति.दे. के न्यास-मंडली के अध्यक्ष श्री वाई.वी.सुब्बारेड्डी ने शनिवार को तिरुमल में स्थित अन्नमय्या भवन में विमोचन किया।

तिरुपति
श्री कपिलेश्वरस्वामीजी का वार्षिक ब्रह्मोत्सव

१४-०२-२०२० से
२३-०२-२०२० तक

१४-०२-२०२० शुक्रवार
दिन - ध्वजारोहण
रात - हंसवाहन

१५-०२-२०२० शनिवार
दिन - सूर्यप्रभावाहन
रात - चंद्रप्रभावाहन

१६-०२-२०२० रविवार
दिन - भूतवाहन
रात - सिंहवाहन

१७-०२-२०२० सोमवार
दिन - मकरवाहन
रात - शेषवाहन

१८-०२-२०२० मंगलवार
दिन - तिरुचि में उत्सव
रात - अधिकारनंदिवाहन

१९-०२-२०२० बुधवार
दिन - व्याघ्रवाहन
रात - गजवाहन

२०-०२-२०२० गुरुवार
दिन - कल्पवृक्षवाहन
रात - अश्ववाहन

२१-०२-२०२० शुक्रवार
दिन - रथ-यात्रा
रात - नंदिवाहन (महाशिवरात्रि)

२२-०२-२०२० शनिवार
दिन - पुरुषामृगवाहन
रात - (कल्याणोत्सव) तिरुचि उत्सव

२३-०२-२०२० रविवार
दिन - सूर्यप्रभावाहन में नटराजस्वामी, त्रिशूलस्नान
रात - ध्वजावरोहण, रावणासुरवाहन

SAPTHAGIRI (HINDI) ILLUSTRATED MONTHLY Published by Tirumala Tirupati Devasthanams
printing on 25-01-2020. Regd. with the Registrar of Newspapers under "RNI" No.10742, Postal Regd.No.TRP/11 - 2018-2020
Licensed to post without prepayment No.PMGK/RNP/WPP-04/2018-2020